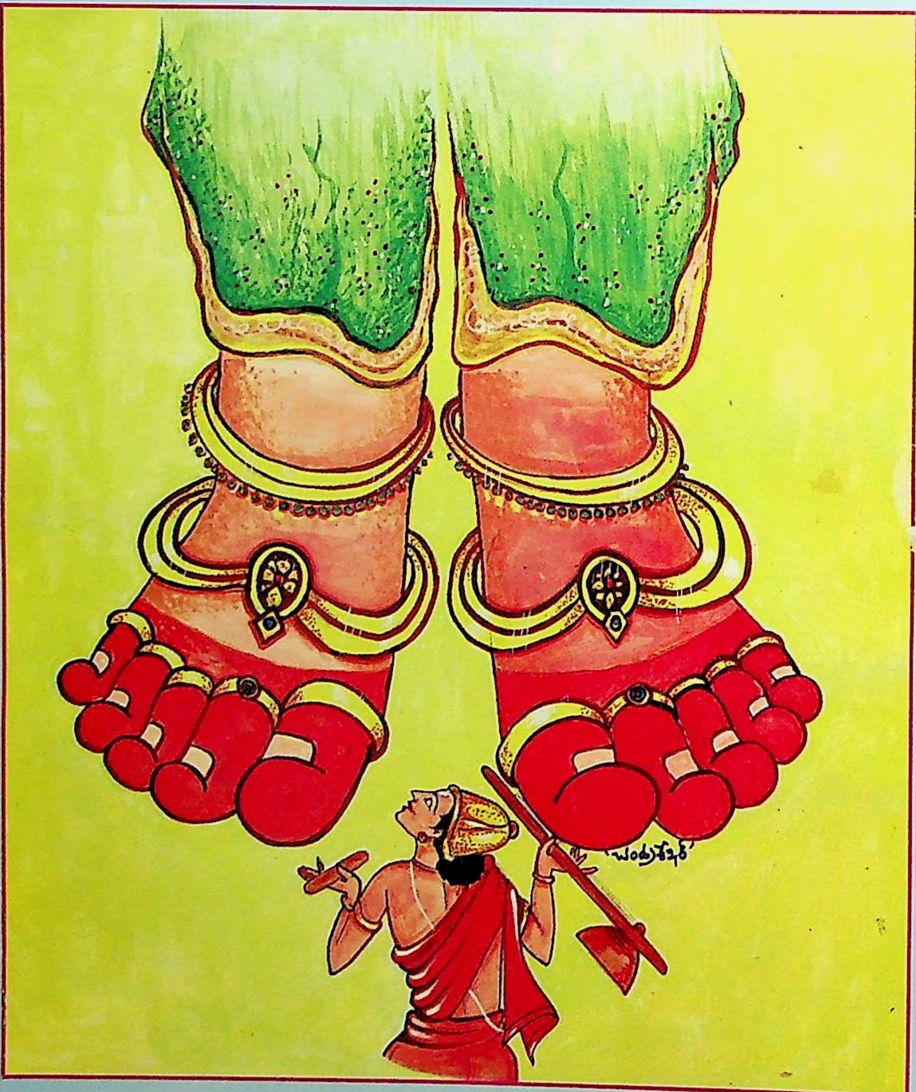
श्रीवेंकटेश्वर वचन

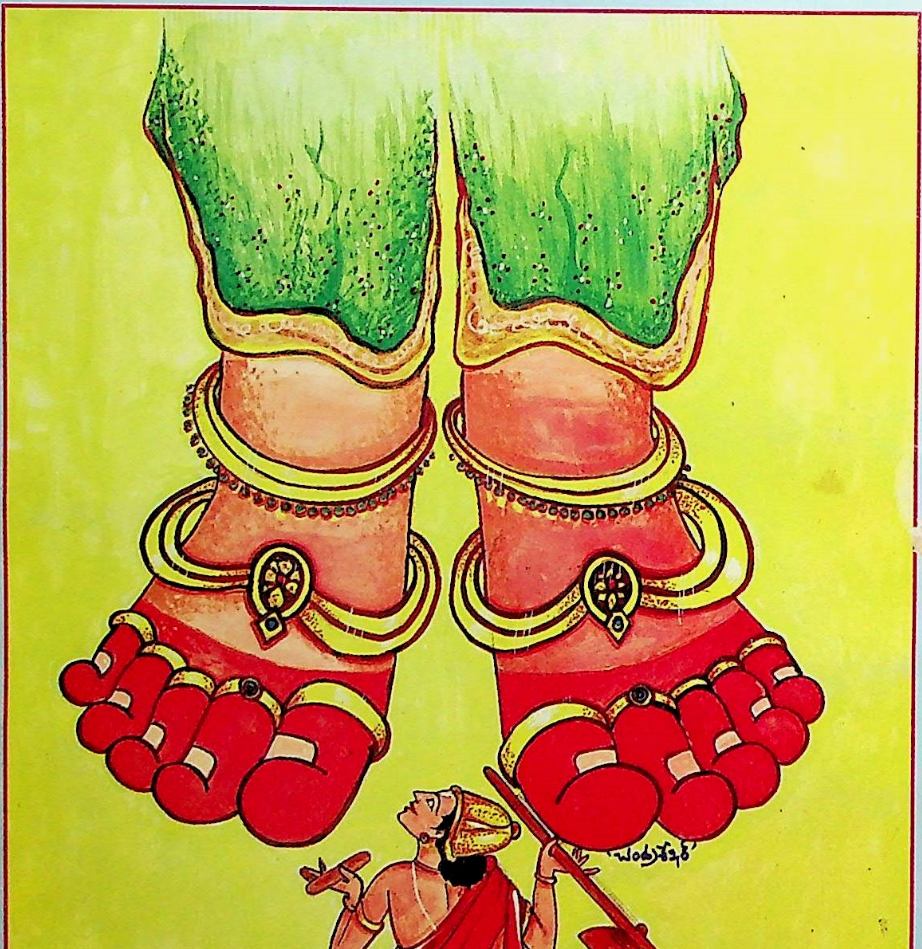
तेलुगु मूल : श्री ताल्लपाक पेदतिरुमलाचार्य
हिन्दी रूपांतरकार : प्रो. भीमसेन निर्मल



तिरुमल तिरुपति देवस्थान, तिरुपति

श्रीवेंकटेश्वर वचन

तेलुगु मूल : श्री ताल्लपाक पेदतिरुमलाचार्य
हिन्दी रूपांतरकार : प्रो. भीमसेन निर्मल



तिरुमल तिरुपति देवस्थान, तिरुपति

श्रीवेंकटेश्वर वचन

मूल : श्री ताल्लपाक पेदतिरुमलाचार्य
(तेलुगु के पदकवितापितामह ताल्लपाक अन्नाचार्य के सुपुत्र)

संपादन और भूमिका लेखन
स्व. वेटूरि प्रभाकर शास्त्री

हिन्दी रूपांतरकार
प्रो. भीमसेन निर्मल

TIRUMALA TIRUPATI DEVASTHANAMS
श्रीनिवासो विजयते

तिरुमल तिरुपति देवस्थान, तिरुपति
2001

SRI VENKATESWARA VACHAN

by

Tallapaka Peda Tirumalacharya

Hindi Translation

Prof. Bhimasen Nirmal

T.T.D. Religious Publications Series No. : 238

T.T.D. First Edition : 2001

Copies : 2000

Cover Page Art : **Sri Gajula Chandra Sekhar**

Published by

Dr. P. KRISHNAIAH, I.A.S.,
Executive Officer,
Tirumala Tirupati Devasthanams,
TIRUPATI - 517 507.

Laser Typesetted at

ANNAPURNA GRAPHICS,
53/3, R.S.Gardens, Tirupati.
✆ : 35006

Printed at

TTD Press, TIRUPATI.

प्रकाशकीय ....

यह हमारा सौभाग्य है कि हमारे प्राचीन संतकवियों ने भगवान की लीलाओं एवं महिमाओं का गुणगान करते हुए विपुल साहित्य की रचना की है। इन्होंने अपने विचारों और भावों को मात्र पंडितों व विद्वानों तक सीमित न रखकर, जनसामान्य तक पहुंचाने में सफलता प्राप्त की है। इसलिए वे चिरस्मरणीय हैं।

हमारा देश सुविशाल एवं सुसंपन्न है। हब सब भारतीय एक हैं और हमारी संस्कृति एक है। हमारे भक्तकवियों ने हमें यही उपदेश दिया है। संस्कृति का परिरक्षण व एकता को कायम रखने के उद्देश्य से आचार - व्यवहारों के आदान - प्रदान द्वारा एवं हमारे भक्तकवियों द्वारा प्रदत्त विविध भाषाओं के साहित्य को अनुवाद के माध्यम से लोगों तक पहुंचाने के कार्य मे देवस्थान संलग्न है।

कलियुगवरद एवं तिरुमल में विराजमान भगवान बालाजी के अनन्य भक्त श्री ताल्लपाक अन्नमाचार्य ने संकीर्तन - कुसुमों द्वारा अपने आराध्य देव की अर्चना की है। लगभग ३२,००० अध्यात्म व श्रृंगार संकीर्तनों की रचना करके, आपने तेलुगु के पदकवितापितामह की उपाधि प्राप्त की है। इसी क्रम को जारी रखते हुए आपके पुत्र व पौत्र श्री पेद्द तिरुमलाचार्य एवं श्री चिन तिरुमलाचार्य ने सुंदर व सुमधुर रचनाओं द्वारा तेलुगु साहित्य की श्रीवृद्धि की।

प्रस्तुत पुस्तक 'श्री वेंकटेश्वर वचन' की श्री अन्नमाचार्य के पुत्र श्री पेद्द तिरुमलाचार्य ने तेलुगु वचनों में रचना की है। इन वचनों में विशिष्टाद्वैत

सिद्धांत, वैष्णव संप्रदाय, तीर्थाटन की महिमा, भगवान में भक्ति भावना आदि विषय परिलक्षित होते हैं। इन सरल व सुमधुर तेंलुगु वचनों का सुविख्यात हिन्दी साहित्यज्ञ एवं हैदराबाद के उस्मानिया विश्वविद्यालय के पूर्व हिन्दी विभागाध्यक्ष डॉ. भीमसेन जी 'निर्मल' ने हिन्दी में रूपान्तरण किया है। अनुवाद की भाषाशैली अवश्य ही पाठक को आकृष्ट करेगी। इसके लिए अनुवादक ने विशेष रुचि ली। मैं उनको धन्यवाद समर्पित करता हूँ।

मुझे विश्वास है कि हिन्दी भाषा-भाषी हमारे इन प्रयासों की सराहना करेंगे तथा इस पुस्तक का समादर करेंगे।

तिरुपति, **पि. कृष्णय्य,** आई.ए.एस.,

30-01-2001 *कार्यनिर्वहणाधिकारी।*

अनुवादक की कलम से . . .

मैं सन् १९६१ में सपत्नीक (युगादि के समय) सप्तगिरीश्वर भगवान बालाजी वेंकटेश्वर के दर्शनार्थ पहली बार तिरुपति गया था। उस समय मैं ने अन्य कुछ पुस्तकों के साथ ब्रह्मश्री वेटूरि प्रभाकर शास्त्री (सुविख्यात समालोचक और प्राचीन ग्रंथों के समुद्धारक) द्वारा संपादित 'श्रीवेंकटेश्वर वचन' की प्रति खरीदी थी। मेरी धर्मपत्नी श्रीमती कात्यायनी ने उक्त ग्रंथ का हिन्दी में अनुवाद करने के लिए अनुरोध किया, लेकिन लौकिकताओं मे फँसे रहने के कारण मैं उस कार्य को कर नहीं पाया। कीर्तिशेष श्री तिरुमल रामचंद्रजी (सुप्रसिद्ध लेखक एवं आलोचक) ने मुझे प्रेरित क़िया कि यदि तुम तीन महीने में अनुवाद का काम पूरा कर दोगे, तो मैं श्रीवेंकटेश्वर वचनों के हिन्दी अनुवाद को तिरुमल तिरुपति देवस्थान की ओर से प्रकाशित करा दूँगा। (उस समय श्री रामचंद्र देवस्थान के प्रकाशन उपसमिति के अध्यक्ष थे)। अब मैं उनके आग्रह को टाल नहीं सका। अन्य सभी काम छोड़कर मैं ने श्री वेंकटेश्वर वचनों के अनुवाद के कार्य को पूरा किया और उनके हाथों सौंप दिया। यह मेरे सौभाग्य का विषय है कि श्री तिरुमल रामचंद्रजी की सत्प्रेरणा से अनूदित इस ग्रंथ को तिरुमल तिरुपति देवस्थान द्वारा प्रकाशित किया जा रहा है। तदर्थ मैं श्री एन.एस. राममूर्ति (संपादक, प्रकाशन विभाग), श्री पि. कृष्णय्य, आई.ए.एस. (कार्यनिर्वहणाधिकारी) तथा देवस्थान के अन्य अधिकारियों का हृदय से आभार मानता हूँ।

मेरी पांडुलिपि का पुनरीक्षण करनेवाले डा. इलपावुलूरि पांडुरंगारावजी के शब्दों में श्री वेंकटेश्वर वचनों में नादब्रह्म त्यागराज की रागसुधा और रवींद्रनाथ ठाकुर की गीतांजलि का अपूर्व सम्मिश्रण कर, पेदतिरुमलाचार्य ने भक्त जनों के रसास्वाद के लिए इस वचनामृत को प्रदत्त किया है। ऐसे उत्कृष्ट वचनामृत को हिन्दी के सुधी पाठकों तथा भक्त जनों के करकमलों में प्रस्तुत करने का सौभाग्य प्रदान करनेवाले भगवान श्रीवेंकटेश्वर के चरण-कमलों में सहस्रशः प्रणाम।

इस अनुवाद में मूल रचना के भक्ति-रसामृत और रचना-कौशल से पाठकों का यत्किंचित् भी परिचय मिल जाए, तो मैं अपने प्रयास को सार्थक समझूँगा। भगवन्नाम-स्मरण से जीवन को सफल बनानेवाले 'वेंकटपति' के अव्याज-अनुग्रह की स्तुति करने के लिए मेरे पास समुचित शब्द कहाँ ?

इति शम्।

भक्तजन विधेय

भीमसेन निर्मल

विषय सूची

भूमिका

वचन-रचना : आन्ध्र वाङ्मय में, प्राचीन काल में वचन-काव्य-रचना अधिक नहीं हुई है। महाभारत आदि काव्यों में, पद्यरचनाओं के बीच-बीच में कहीं-कहीं दिखाई पड़ने वाली वचन रचनाओं[1] के अतिरिक्त वचनैक-रचनाएं बहुत कम हैं। पद्यैक-रचनाएं (केवल पद्यों में लिखी गई) रचनाएं और भी कम हैं। उल्लेखनीय एकमात्र रचना तिक्कन्ना की कृति "निर्वचनोत्तर रामायण" है। संस्कृत में पद्यैक-रचनाओं की संख्या ही अधिक है। चंपू रचनाएं कम हैं और गद्यैक रचनाएं भी कम हैं। दक्षिण की भाषाओं में, कन्नड भाषा में एक प्रकार की गद्य (वचन) रचनाएं अधिक हैं। वे प्रायः वीरशैव कवियों द्वारा भगवत्प्रार्थना और तत्वार्थ निरूपण करने वाली हैं। ऐसी कतिपय रचनाओं को संकलित कर कन्नड के विद्वानों ने "वचन शास्त्र" नाम दिया है। उन्हें हाल में कुछ खंडो (Volumes) में प्रकाशित किया गया है। कन्नड में ऐसी रचनाएं प्रायः बारहवीं शताब्दी से लिखी गई हैं। कहते हैं, द्रविड भाषा (तमिल भाषा) में प्राचीन काल में वचनैक-रचनाएं थीं ही नहीं। व्याख्या रूपी वचन (गद्य) रचनाएं हो सकती हैं, परन्तु वचनकाव्य-रचना नहीं हुई है।

वामन ने "काव्यालंकार सूत्र" में लिखा है कि संस्कृत में वचन-रचना तीन प्रकार की है : "काव्यं गद्यं पद्यं च। गद्यं वृत्तसन्धिचूर्ण मुत्कलिका प्रायंच, पद्य भागवद् वृत्तगंधि । अनाविद्ध ललितपदं चूर्णम्।

1. तेलुगु साहित्य में प्रारंभ से ही महाकाव्यों, प्रबंध काव्यों, पुराणों आदि में चंपू शैली को अपनाया गया है। वचन (गद्य) रहित काव्यों की रचना बहुत कम हुई है। उन्हें "निर्वचन काव्य" नाम देना पड़ता था। किन्तु ये "वचन" "पद्यगंधी" अर्थात् पद्य के समान ही लयबद्ध होते थे। हां, गणबद्ध नहीं। (अनुवादक)

विपरीतमुत्कलिका प्रायम्''। पद्य भाग के चरणों से युक्त वृत्तों की गंध से भासित होने वाली वचन-रचना ''वृत्तगन्धी'' है। दीर्घ समासों की उलझन से रहित, हल्के-हल्के शब्दों और छोटे-छोटे समासों से युक्त वचन-रचना को ''चूर्ण'' कहते हैं। दीर्घ समासों की उलझन से युक्त, उद्धत-उक्तियों से युक्त रचना को ''उत्कलिकाप्राय'' कहते हैं।

वामन के परवर्ती आचार्य कविराज विश्वनाथ ने वचन के चार प्रकार बताए हैं।

(लेश मात्र भी वृत्त विहीन गद्य के 1. मुक्तक, 2. वृत्तगंधि, 3. उत्कलिकाप्राय और 4. चूर्णिका नामक चार भेद हैं। पहला समास रहित है, दूसरा वृत्त चरणों से मिला-जुला है, तीसरा दीर्घ समासयुक्त है तो चौथा अल्प समासों से युक्त होता है।)

उपरोक्त भेदों से दो के लिए तेलुगु की महाभारत आदि काव्यकृतियों में से वचनभागों को लक्ष्य के रूप में उद्धृत किया जा सकता है। कवित्रय[1] की रचनाओं के वचनों को प्रायः ''चूर्णिका'' कहा जा सकता है। नाचन सोमना, पोतना आदि की रचनाओं में प्राप्त वचनों में से कतिपय को उत्कलिकाप्राय कहा जा सकता है। प्राचीन तेलुगु साहित्य में ''वृत्तगंधि'' वचन प्राय नहीं है। ''प्रबंधराज वेंकटेश्वर विलास'' में वृत्तगंधि-वचन-रचनाएं परिलक्षित होती हैं। आधुनिक काल में श्रीगिडुगु राममूर्ति पंतुलु कृत ''प्रादेनुगुगम्म'' वृत्तगंधि वचन-रचना है।

---

1. महाभारत का तेलुगु में अनुवाद करने वाले नन्नय, तिक्कना और एर्रना को ''कवित्रय'' कहा जाता है। इनकी शैली आदर्श मानी गई है।

कन्नड भाषा में भी वृत्तगंधि वचन-रचनाएं हैं। "रामाश्वमेध" आदि में इसके लक्ष्य देखे जा सकते हैं।

वामन द्वारा उल्लिखित तीन प्रकार की वचन रचनाओं के उदाहरण संस्कृत-वाङ्मय में हैं। यथा, कादंबरी, दशकुमार चरित्र, यशस्तिलकचंपू आदि। श्री भगवद् रामानुजाचार्य के गद्यत्रय में भी हैं। तेलुगु के पाल्कुरिकि सोमनाथ के गद्य ग्रंथों में भी उदाहरण परिलक्षित होते हैं।

श्रीमद् रामानुजाचार्य के "गद्यत्रय" से तीन भेदों के उदाहरण प्रस्तुत किए जा रहे हैं।

चूर्णिका :

अपारकरुणाम्बुधे, अनालोचित विशेषाविशेष लोकशरण्य, प्रणतार्तिहर, आश्रित वात्सल्यैकमहोदधे, अनवरतविदतनिखिलभूत-जातयथात्म्य, सत्यकाम, सत्यसङ्कल्प, आपत्सख, काकुत्स्थ, श्रीमन्नारायण, पुरुषोत्तम, श्रीरङ्गनाथ, ममनाथ नमोऽस्तु। (श्रीरङ्ग गद्यम्)

उत्कलिकाप्राय :

स्वच्छन्दानुवर्ति स्वरूपस्थितिप्रवर्तिभेदाशेष शेषतैकरतिरूप नित्य निरवद्य निरतिशय ज्ञान क्रियैश्वर्याद्यनन्त कल्याण गुणगण शेषासन गरुडप्रमुख नानाविधानन्तपरिजन परिचारिका परिचितचरणयुगल परमयोगि वाङ्मनसा परिच्छेध्यस्वरूपस्वभावस्वाभिमत विविध-विचित्रानन्त भोग्यभोगोपकरण भोगस्थानसमृद्धानन्ताश्चर्यानन्त महाविभवानन्त परिमाणनित्यनिरतिशय श्रीवैकुण्ठनाथ - (शरणागति गद्यम्)

वृत्तगन्धि :

प्रत्यग्रोन्मीलित सरसिज सदृश नयनयुगलम्, स्वच्छनीलजीमूत सङ्काशम् अत्युज्ज्वल पीतवाससम्-स्वयंप्रभया अतिनिर्मलया अतिशीतलया स्वच्छया माणिक्याभयाकृत्स्नं जगद्भासयंतम्-अचिन्त्यदिव्याद्भुत नित्ययौवनस्वभाव लावण्यमयामृत सागरम्-अतिसौकुमार्यादीषत्प्रस्विन्नवदा लक्ष्यमाण ललाटफलक दिव्यालकावली-विराजितम् - प्रबुद्धमुग्धम्बुजचारुलोचनम् - सविभ्रमभ्रूलतम् - उज्ज्वलाधरम् - शुचिस्मितम् - कोमलगण्डम् - उन्नसम् - उदग्रपीनांस विलम्बिकुण्डलालकावली - बन्धुरकम्बुकन्धरम्- प्रियवतंसोत्पल कर्णभूषणश्लथालका - विमर्द - शंसिभिश्चतुर्भिराजानु-विलम्बिर्भुजैर्विराजितम् - अतिकोमल दिव्यरेखालङ्कृताताम्रकरतलम् - दिव्याङ्गुलीयक विराजितम् - अतिकोमल नखावली विराजितम् - अनुरक्ताङ्गुलीभिरलङ्कृतम् - तत्क्षणोन्मीलित पुण्डरीकसदृशचरणयुगलम्-(श्रीवैकुण्ठ गद्यम्)

तेलुगु के लक्षण ग्रंथकर्ताओं ने वचन-रचनाओं के बारे में यों लिखा है:-

"कनुगोन बादरहितमै
पनुपडि हरिगद्देवोले बहुमुखरचनं
बुन मेरयु गद्यमदिदा
देनुगुकृतुल वचनमनग दीपिंचु गड्डुन् ॥"

गद्य — स्वस्तिसमस्तभुवनरक्षादक्ष श्री पुंडरीकाक्ष भुजगपति

सिंहासनारूढ सुरनिकरमकुटतटघटितसुरुचिर मणिगण प्रभाविभासितपादपीठ वेदनिनादानुकार गौरव ललित नूपुरालंकृतसरसिजयुगल नव्यपदांगुष्ठ नखमयूखरेखायित सुरसरित्प्रवह पीतांबरधर नूतनमेखलाकलित कटितटप्रदेश चतुराननजनक नालीकशोभित नाभिसरोवर यखंडब्रह्मांडकलापगोपन निपुणोदर क्षीरसागरतनयामनोज्ञगेही-कृतविपुल वक्षस्स्थल कनत्कनक कटक केयूर प्रमुखभूषण भूषितचतुर्भुज शंखपंकजसुदर्शन गदाधर किरीट कुंडल-कुंडलाभिराम यनवरतप्रसन्नवदन कौंडिन्य वरद श्रीयनंतपद्मनाभ नमस्ते नमस्ते नमः। (अनंत का छंद)

"लक्षण शिरोमणि" नामक ग्रंथ में गद्य के (वचन के) पांच भेद बताए गए हैं, यथा, गद्य, बिरुदगद्य, चूर्णिका, वचन, विन्नप (निवेदन या विनय)। इनमें "गद्य" अनुकरण शब्द युक्त होता है, "बिरुदगद्य" संबोधनांत पदबंधुर होकर रहता है, "चूर्णिका" द्विवचन-बहुवचन के संदर्भ से विभक्ति, अनुशासन्, समासादि समासादित अनल्प कल्पना-जल्पित रहता है, "वचन" बहुप्रकार के रचना निचयप्राचुर्य से युक्त रहता है, "विन्नप" (निवेदन या विनय) ऋजुमार्गों का अनुगमन कर शोभित होता है।

लक्षणग्रंथकर्ता अनंतामात्य का समय ईसवी पंद्रहवीं शती का है। उनके बताए गद्य-लक्षण के अनुरूप ही कन्नड और आंध्र भाषाओं में प्राचीन वचन रचनाएं लिखी गई हैं। लक्षणशिरोमणि का रचयिता पोत्तरि वेंकटरमण कवि संभवतः सत्रहवीं शताब्दी का है। उनके द्वारा उल्लिखित "विन्नप" ही अनंत के बताए "गद्य" हैं। ऐसी रचनाएं एक-दो मिनिटों

में पढी जा सकने वाली और देवता-स्तुति और देवता संबोधन पदों से युक्त होते हैं। इन्हीं को ताल्लपाक़ के कवियों ने "वचनगीत" और "तालगंधिचूर्णिका" कहा है। इसे आगे विस्तार से बताऊँगा।

अनंतामात्य के समय तक तेलुगु में संभवतः भारत, भागवत आदि वचनैक - रचनाएं नहीं हैं। उनका अनंत ने उल्लेख नहीं किया है। लक्षणशिरोमणिकार ने अपने द्वारा किए गए विभाजन में चौथा विभेद "वचन" के रूप में परिभाषित किया है। इनके समय तक "चूर्णिका" "लघु-लघु शब्दों की प्रसन्न रचना" न होकर, संस्कृत की उत्कलिका के समान हो गई है। "प्रबंधराजविजय", "वेंकटेश्वर विलास" आदि रचनाओं में "सर्वलघुवचन" (सभी अक्षर लघु हों), अंत्यानुप्रास युक्त चतुर्दलचूर्णिका आदि वचन-रचना के प्रभेदों को देखा जा सकता है। इसके अतिरिक्त आंध्र भाषा के नन्नया आदि कवियों की कृतियों के आश्वासांत की वचन-रचनाओं को "आश्वासांत गद्य" कहने की परिपाटी है। उन्हें लक्षणशिरोमणि के कर्ता के बताए "बिरुद गद्य" मान सकते हैं। उनके अनुसार ऐसे बिरुद गद्यों का संबोधनांत होना चाहिए। प्राचीन काल के राजाओं के बिरुद-गद्यों में - सभी में - संबोधनांत नियम नहीं हैं। आश्वासांत बिरुद गद्य तो संबोधनांत नहीं होते न।

1. पेदतिरुमलाचार्य के समय में ये वचन ताम्रपत्रों पर लिखे जाकर, तिरुमल तिरुपति देवस्थानम् में सुरक्षित रखे गये थे। इनके अतिरिक्त ताल्लपाक वंश वालों की पद्य-गद्य-गेय रचनाओं में अधिक भाग ताम्रपत्रों पर लिखे जाकर सुरक्षित किए गए थे। सुना है, उनमें कुछ ताम्रपत्र अहोबिल मठ में, और कुछ श्रीरंगनाथ क्षेत्र में स्थानांतरित हुए हैं और अभी हाल में कुछ ताम्रपत्र अहोबिल में तांबे के घडों के बदले में चार - पांच सौ रुपयों में बेचे गए हैं। अब तक तिरुपति देवस्थानम् वालों ने ताम्रपत्रों पर की कुछ रचनाओं.को प्रकाशित किया है।

मेरा अनुमान है कि उपरोक्त परिभाषाओं को ध्र्यान में रखकर, कन्नड और आन्ध्र के वैष्णव और शैवभक्तों ने ''वचनों'' की रचना की है। तेलुगु में मेरी दृष्टि में, सर्वप्राचीन ''सिंहगिरि वचन'' हैं। इन्हें कर्ता के नाम पर ''कृष्णमाचार्य संकीर्तन'' कहते हैं। कृष्णमाचार्य वरंगल के काकतीय प्रतापरुद्र के समकालीन थे।

इनके अतिरिक्त मध्ययुग में शंकरवचन, शठकोप विन्नपं, कालज्ञान वचन, काशिकावचन, भवानी मनोहर वचन, शिवराजयोग वचन, लक्ष्मीवल्लभ वचन, शेषगिरिनाथ वचन आदि भी प्राप्त हुए हैं। मेरा मत है कि ये सब लगभग चौदहवीं शताब्दी के बाद की रचनाएं हैं। जहां तक मेरी जानकारी है, ''सिंहगिरि वचन'' (कृष्णमाचार्य संकीर्तन) के बाद ''वेंकटेश्वर वचन'' ही उल्लेखनीय हैं। इनमें पहला तेरहवीं शती के प्रथम दशकों की रचना है तो दूसरी पंद्रहवीं शती के अंतिम भाग की। यहाँ चर्चा का विषय ''श्री वेंकटेश्वर वचन'' है।

तालगंधि चूर्णिका

''श्रीवेंकटेश्वर वचन'' श्रीवेंकटेश्वर स्वामी के दिव्य आस्थान (-सभा) में संकीर्तनाचार्य के रूप में प्रसिद्ध ''ताल्लपाक'' वंश वालों की रचनाएं हैं। इसके कवि ताल्लपाक पेदतिरुमलाचार्य का समय पंद्रहवीं शती के चतुर्थ चरण से सोलहवीं शती के पूर्वार्ध का था। पेदतिरुमलाचार्य के पुत्र चिनतिरुमलाचार्य ने अपने पिता और दादा अन्नमाचार्य की रचनाओं के आधार पर, ''संकीर्तनों'' की परिभाषा की है। यह संस्कृत के लक्षण ग्रंथों के अनुरूप ही है। लगता है कि इन तालगंधि चूर्णिकाओं

की परिभाषा के अनुसार लिखे गए इन वचनों की रचना कर, पेदतिरुमलाचार्य भगवान की सन्निधि (मंदिर) में राग-ताल युक्त रूप से गाया करते थे। ताम्रपत्रों के आधार पर ति.ति.दे. की ओर से प्रकाशित सैंतालीस वचनों के राग और ताल निर्णीत हैं। उसमें इन्हें "वैराग्य-वचन-मालिका-गीत" कहा गया है। अर्थात् वचन होने पर भी इन्हें गीतों के रूप में गाया जा सकता है। इसीलिए "संकीर्तन लक्षण" के अनुसार इन्हें "ताल-गंधि चूर्णिका पद" कहा गया है। संस्कृत में वामन के वृत्तगंधि, उत्कलिका प्राय, चूर्ण नामक विभाजन में से "चूर्ण" को ही चिनतिरुमलाचार्य ने "तालगंधि" नामक पद रचना-भेद माना है। इनकी मान्यता है कि लघु-लघु शब्दों से युक्त होने के कारण ही इन वचन-रचनाओं को "चूर्ण कहा गया है। "वेंकटेश्वर वचन" भी लघु-लघु शब्दों से बने हुए हैं, इनमें उद्धृत-उक्तियां या प्रौढ़ समास नहीं हैं। संकीर्तन-लक्षण-पद्य में कहा गया है कि ऐसी पद-रचनाओं के लिए कृष्णामाचार्य आदि (प्रथम) सर्जक हैं। परवर्तीकाल के इन्हीं को "विन्नप" (निवेदन या विनय के पद) कहा गया है।

वेंकटेश्वर वचन और उनका मह॰॰

इन वचनों की रचना का कोई क्रम दिखाई नहीं पड़ता। वस्तु-विन्यास में भी कोई क्रम नहीं है। लगता है, कवि ने जब-तब अपने मन में जो भाव आया, उसे लिख दिया है। इनमें विशिष्टाद्वैत सिद्धांत और तत्संबंधी विचार भरे हुए हैं। वेंकटेश्वर वचनों के रचयिता के स्मार्त नंदवरीक ब्राह्मण होने पर भी उसने बैष्णव धर्म को स्वीकार कर लिया था। वह बड़ी विनय और आर्ति से, परमार्थप्राप्ति के लिए इन वचनों में

भगवान वेंकटेश्वर से प्रार्थना करता है। विशिष्टाद्वैत सिद्धांत के मूलभूत तत्व-शरणागति को इन वचनों में प्रस्तुत किया गया है। कवि इन वचनों में भगवान को ''तुम'' कहकर और कहीं-कहीं ''आप'' कहकर संबोधित करता है। एक ही वचन में ''तुम'' और ''आप'' का प्रयोग भी हुआ है। पिता की गोद में बैठे हुए बालक का प्रेम-वात्सल्य के कारण, तुतली बोली में हल्के ढंग से ''तुम'' कहकर, इतने में बडप्पन का स्मरण कर, आदरभाव से ''आप'' कहकर सम्मानित करना लोक-सहज-अनुभव ही है न। यह अनुभूति इस विधान का समर्थन करती है। इस कारण से मैंने मूलपाठ में कोई परिवर्तन नहीं किया है।

इस ग्रंथ के 147वें वचन में 108 तिरुपतियों के नाम गिनाए गए हैं। आधुनिक द्राविड वैष्णवसंप्रदाय के ग्रंथों में 108 तिरुपतियों के (पुण्यक्षेत्रों के) नामों का उल्लेख है। इन पुण्य स्थलों की गणना उस रूप में कब से की गई, मैं पता लगा नहीं पाया। किन्तु अर्वाचीन ग्रंथों में दिए गए नामों में और ''वेंकटेश्वर वचनों'' में दिए गए नामों में काफी अंतर है। सन् 1480 के आस-पास 108 तिरुपतियों के नाम और उनका क्रम इस ग्रंथ से स्पष्ट हो जाता है। लगता है, हस्तलिखित प्रति में कुछ पुण्य क्षेत्रों के नाम गलत दिए गए हैं। ''प्रबंधराज वेंकटेश्वर विलास'' और ''हंसविंशति'' नामक काव्य-ग्रंथों में 108 तिरुपतियों के नाम ''वेंकटेश्वर वचनों'' में दिए गए अनुसार ही हैं।

इन वचनों की रचना-रीति अनंत द्वारा बताए गए गद्य (वचन के लक्षण) की परिभाषा के अनुकूल है। लक्षणशिरोमणिकार के ''विन्नप'' की परिभाषा के लिए इन वचनों को उत्तम लक्ष्य (उदाहरण) के रूप में

प्रस्तुत किया जा सकता है। दूरान्वय, क्लिष्ट समास, अनुप्रास-विन्यास के लिए श्रम की आवश्यकता इसमें दिखाई नहीं पड़ती। भावों को एकदम साफ-सीधे ढंग से व्यक्त किया गया है। कुछ वचन विश्वकवि रविबाबू की "गीतांजलि" के गीतों का स्मरण दिलानेवाले हैं। कृष्णमाचार्य के सिंहगिरि वचन भी इसी प्रकार के हैं किन्तु उनमें भाषा की प्राचीनता स्पष्ट रूप से परिलक्षित होती है। लगता है, प्राचीन काल में इन वचनों को राग-ताल से युक्त रूप में गाया जाता था। कवि ने ही स्वयं इनके भावानुगुण रूप से राग तालों का निर्णय किया है।

ताल्लपाक-वंश

इस ग्रंथ के कर्ता ताल्लपाक पेदतिरुमलाचार्य स्मार्त और नंदवरीक ब्राह्मण थे। "ताल्लपाक" गाँव आज के राजंपेट तालूके में है। यह उनका निवास स्थान है। इनके पिता का नाम "अन्नमाचार्य" है।

अन्नमाचार्य

इन्होंने वैष्णव धर्म को स्वीकार किया था। ये महान् भक्त और सरस कवि थे। महिमाओं से युक्त थे। ये 96 वर्ष जीवित रहे। ज्ञात हुआ है कि ये अपने पुत्र पेदतिरुमलाचार्य की इच्छा पर, दिन में कम से कम एक संकीर्तन (पद) की रचना कर, श्रीवेंकटेश्वर के समक्ष गाया करते थे। कहते हैं कि जब ये सोलह वर्ष के थे, भगवान वेंकटेश्वर ने इन्हें दर्शन दिए। तब से लेकर लगातार अस्सी वर्ष तक ये संकीर्तनों की रचना करते रहे।

---

1. इनका उल्लेख पेरिय तिरुमलाचार्य, पेद तिरुमलाचार्य, पेद तिरुमलय्य, तिरुमलार्य देशिक के रूप में हुआ है। इनके रचित बारह पुस्तकें प्राप्त हैं।

अन्नमाचार्य के "संकीर्तनाचार्य", "द्राविडागम सार्वभौम", "पंचमागम चक्रवर्ती" आदि बिरुदनाम हैं। ये वेंकटेश्वर स्वामी के श्वसुर हैं। क्योंकि ये अलिवेलुमंगांबा के पिता लगते हैं। कहते हैं कि श्रीवेंकटेश्वर ने यह प्रतिज्ञा की कि जिन कानों से अन्नमाचार्य के संकीर्तन सुने हैं, उनसे दूसरों के संकीर्तन नहीं सुनूँगा। इनके लिखे चार ग्रंथों का उल्लेख मिलता है। (1) अध्यात्म संकीर्तन (2) श्रृंगार संकीर्तन (3) श्रृंगार मंजरी (4) संकीर्तन-लक्षण (संस्कृत में लिखा गया यह ग्रंथ अनुपलब्ध है।) इस कवि के बारे में शिलालेखों में कहीं उल्लेख नहीं मिलता। लेकिन ताल्लपाक चिन्नन्ना नामक कवि ने इनकी जीवनी द्विपद छंद में काव्यबद्ध किया है। अन्नमाचार्य के ही पुत्र हैं पेदतिरुमलाचार्य।

पेदतिरुमलाचार्य[1]

ये इस ग्रंथ, - श्रीवेंकटेश्वर वचन के - कर्ता हैं। ये वचन ति.ति.देवस्थानम के भांडागार में, ताम्रपत्रों पर लिखे हुए प्राप्त हुए हैं। ग्रंथ के प्रारंभ में "तिरुमलाचार्य रचित" लिखा गया है। ये "महैश्वर्य-महित (संपन्न) के रूप में विराजमान थे। इन्होंने श्री वेंकटेश्वर के अनेक प्रकार के कैंकर्य (सेवाएँ) कराए। स्वामी ने इनको तथा इनके बाद तीन पीढ़ियों तक प्रत्यक्ष दर्शन, तदननंतर सात पीढ़ियों तक परमपद मोक्ष अनुगृहीत किया। 1. श्रृंगार संकीर्तन, 2. श्रृंगार दंडक, 3. चक्रवाल मंजरी, 4. श्रृंगार वृत्त शतक, 5. वेंकटेशोदाहरण, 6. नीति-सीस (एक प्रकार का छंद) - शतक 7. सुदर्शन रगड, 8. रेफ-रकार निर्णय, 9. आंध्र वेदांत (द्विपद छन्दों में) 10. आंध्रहरिवंश, 11. भगवद्गीता (वचन) 12. श्रीवेंकटेश्वर प्रभात स्तव।

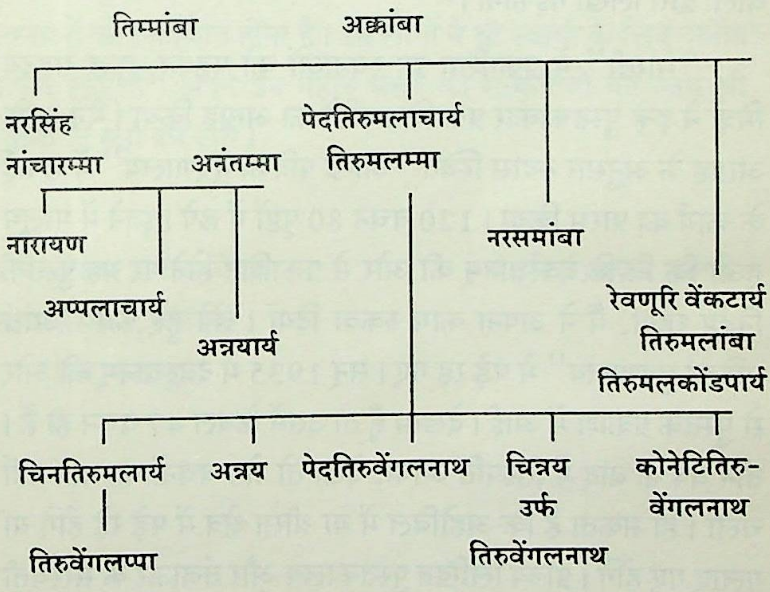
इनकी ''वेदांत प्रतिष्ठापनाचार्य'' की उपाधि है। इन्होंने भगवान वेंकटेश्वर के लिए जो कैंकर्य (सेवाएं) कराए थे, उनका विवरण इस प्रकार है :-

पेद तिरुमलय्याजी ने सन् 1517 से 1552 तक श्री वेंकटेश्वर स्वामी के और अन्य स्थानों के देवताओं के नैवेद्य-प्रसादोत्स्व आदि कैंकर्यो (सेवाओं) के लिए 14 गाँव समर्पित किए। ये गाँव इन्हें अच्युत-राय, बुक्कय तिम्मराजु आदि से दान-स्वरूप प्राप्त हुए थे। इनके अतिरिक्त कई हजार सिक्के अनेक पुण्य कार्यों के लिए समर्पित किए। तिरुमल-निवासी भगवान श्री वेंकटेश्वर पर अपने पिता तथा अपने लिखे गए संकीर्तनों को ताम्रपत्रों पर लिखवाकर, उनकी सुरक्षा तथा अर्चना के लिए पर्याप्त धनराशि दानके रूप में दी। इन संकीर्तनों के गायन के लिए मंदिर में दो वैष्णवों की नियुक्ति की। स्वामी के मंदिर के निकट की पुष्करिणि (सरोवर) तथा अन्य कई गोपुरों, मंडपों की मरम्मत करवाई। पुष्करिणि के मध्य स्नान-मंडप का निर्माण करवाया। ऐसे कई पुण्यकार्य किए। ये भी पिता के समान पूर्णपुरुष के आयुष्य को प्राप्त कर धन्य बने। इनके पिता अन्नमाचार्य सन् 1408 से 1503 तक जीवित रहे। यह मान लें कि ये अन्नमाचार्य के तिरसठवें वर्ष में उत्पन्न हुए तो इनका जन्मकाल सन् 1468 होगा। ये सन् 1552 के बाद भी जीवित रहे। अर्थात् लगभग अस्सी वर्ष जीवित रहे।

इनके दो सातानि वैष्णव शिष्य थे। उन्होंने भी अपने गुरु के समान ही स्वामी के लिए कुछ कैंकर्य कराए। इनके पुत्र चिन्नन्ना (चिन तिरुवेंगलनाथ) रचित ''अन्नमाचार्य चरित'' के अनुसार अन्नमाचार्य वैखानस वैष्णव बने थे।

पेदतिरुमलाचार्य के पांच पुत्र थे। (1) चिन तिरुमलाचार्य, 2. अन्नय, 3. पेद तिरुवेंगलनाथ, 4. तिरुवेंगलनाथ (चिन्नन्ना) 5. कोनेटि तिरुवेंगलनाथ। इनमें चौथे पुत्र तिरुवेंगलनाथ कृत ''अष्टमहिषी कल्याणं'' में इनका वंशवृक्ष दिया गया है। वह इस प्रकार है —

1. अन्नमाचार्य (1408-1503)



इस ताल्लपाक वंशवालों के लिए रेवणूरि वंशवाले जामाता हैं। रेवणूरि वेंकट कवि ने अपने ''शकुंतला परिणय'' में अन्नमाचार्य को अपना मातामह (नाना) बताया है। अपने एक ग्रंथ ''श्री पादरेणु माहात्म्य'' में उन्होंने अपने आप को ''संकीर्तनाचार्य दौहित्रवंश्य'' लिखा है। अस्तु,

ग्रंथ मुद्रण :

आज से बीस वर्ष पूर्व प्राच्य लिखित पुस्तकालय (ओरियंटल मैन्युस्क्रिप्ट्स लायब्रेरी) में प्राप्त श्री वेंकटेश्वर वचनों की प्रतियों का उद्धार कर, उन्हें "भारती" नामक साहित्यिक मासिक पत्रिका में प्रकाशित करने लगा। तब मेरा अनुमान था कि ये रचनाएँ ताल्लपाक वंश वालों द्वारा लिखी गई होंगी।

"भारती" में प्रकाशित इन रचनाओं को पढ़कर, कुछ सहृदय मित्रों ने इन्हें पुस्तकाकार प्रकाशित करने का आग्रह किया। मैंने उनके आग्रह के अनुसार मद्रास स्थित "आन्ध्र पत्रिका मुद्रणालय" में छपाई के कार्य का प्रारंभ किया। 120 वचन 80 पृष्ठों में छपे। इतने में मालूम हुआ कि ति.ति.देवस्थानम् की ओर से प्रकाशित होने पर यह पुस्तक निर्दुष्ट रहेगी, मैं ने अपना काम रुकवा दिया। छपे हुए फर्मे "आंध्र पत्रिका मुद्रणालय" में पड़े रह गए। सन् 1935 में देवस्थानम् की ओर से पुस्तक प्रकाश में आई। देखता हूँ तो उसमें केवल 47 वचन ही हैं। तीन वर्ष के बाद मैं तिरुपति आया, देखा तो शेष वचनों का पता नहीं चला। हो सकता है कि अहोबिल में या श्रीरंग क्षेत्र में पड़े रहे होंगे या गलाए गए होंगे। प्राच्य लिखित पुस्तकालय और तंजाऊर के सरस्वती महल पुस्तकालय में प्राप्त वचनों को जुटाकर देखा तो कुल मिलाकर 175 वचन प्राप्त हुए। अनुमान यही है कि शेष लुप्त हो गए होंगे। तिरुपति में छपी पुस्तक असमग्र और दोषभूयिष्ठ थी। तब मैंने श्रीवेंकटेश्वर प्राच्य विद्यालय के डायरेक्टर, श्रीमान एम. कृष्णमाचार्य जी से इसकी

---

1. सप्तगिरि

चर्चा की। तो उन्होंने सारा कार्यभार मुझे सौंप दिया। मेरे कार्यभार को सम्हालने तक श्रीमान् कृष्णमाचार्य दिवंगत हो गए। उनके बाद श्रीमान् परवस्तु वेंकटरामानुजस्वामी, एम्.ए. ने इस कार्य को संपन्न करने का आदेश दिया। इस प्रकार श्री स्वामी का स्तुति-ग्रंथ और श्री स्वामी के आस्थान कवि द्वारा रचित ग्रंथ आज ति.ति.देवस्थानम् की ओर से प्रकाशित हुआ है। ताल्लपाक वंशज महान् भक्त हैं। उनकी और कई रचनाओं को प्रकाशित होना है। उन लोगों ने श्री स्वामी के लिए अनेक कैंकर्य किए हैं। अपने उन महान् भक्तों की सत्कृतियों को स्वयं श्री स्वामी ही रक्षा कर लेंगे।

- वेटूरि प्रभाकरं शास्त्री

श्रीवेंकटेश्वर प्राच्य-विद्या-
शोध संस्थान, तिरुपति
तारण, फाल्गुन

श्रीवेंकटेश्वर वचन

-1-

श्री वेंकटगिरि के देव। यह देह तुम्हारा नित्य निवास है। मेरे ज्ञान-विज्ञान तुम्हारे दोनों पार्श्वों के दीप हैं, मेरे नासिका - रंध्रों के श्वास तुम्हारे दोनों ओर के आलवट्ट[1] हैं, मेरा मनोराग तुम्हारे लिए गेरुए रंग का वस्त्र है, तुम्हें प्रणाम करने के लिए उठे मेरे दोनों हाथ दो मकरतोरण हैं, मेरी भक्ति ही तुम्हारे लिए सिंहासन है, मेरे शरीर पर अंकुरित पुलक-मालाएँ तुम्हें समर्पित पुष्पहार हैं, तुम्हारी स्तुतियों के मेरे अक्षर-नाद भेरी-भांकार-घंटा-निनाद हैं, मेरे पुण्य-परिपाक तुम्हारे लिए नैवेद्य - तांबूल हैं, मेरी नित्य सेवा के समय की प्रतीक्षा तुम्हारे सर्वागों पर पुती जवादि[2] है, मेरा सात्विक गुण तुम्हारे लिए धूप-परिमल है, तुम देव हो तो मैं अर्चक हूँ। इस प्रकार के मेरे नित्योत्सव पर ध्यान दो हे श्री वेंकटेश्वर !

-2-

हे नंदक - आयुध धारण करनेवाले ! तुम्हारे आयुधों की जय हो, तुम्हारे वाहनों का शुभ हो, तुम्हारे परिजनों का कुशल-मंगल हो, तुम्हारे कल्याणप्रद गुणों की निरंतर वृद्धि (विकास) हो, तुम्हारे सत्त्वों का शोभनकर परंपराभिवृद्धि हो, तुम्हारी देवियों को मंगल-महा-श्री प्राप्त हो, तुम्हारी महिमा का अनंतविध अर्चन हो; तुम्हारे भुजबल को अपरिमित स्तोत्र; तुम्हारे सौंदर्य को यही पुष्पांजलि; तुम्हारी उदारता

---

1. कपडे से बने पंखे 2. सुगंधित अंगराग

की शरण; तुम्हारे श्रीवत्स, कौस्तुभ आदि चिह्नों को निरंतर प्रार्थना। तुम्हारे चरणों को साष्टांग नमस्कार करता हूँ। पूछोगे कि किस कारण से यह सब कुछ कर रहे हो। चार युगों के धर्म, समस्त जंतुओं के परिणाम-क्रम, कमलासन आदि देवताओं का अस्तित्व, सभी के मूल तुम हो। इसलिए तुम्हारा मंगलयुक्त रहना ही हमारे लिए भला है है श्री वेंकटेश्वर !

-3-

हे अलमेलु-मंगा देवी के पति ! खोज कर तुम्हारा पता लगाने के लिए हमारी सामर्थ्य ही क्या ? तुम्हारे बारे में गुरुजनों से पूछकर कि तुम वैकुंठ में रहते हो, तुम्हारे गोत्र का नाम जाना। विष्णु, वासुदेव, नारायण नाम सुनकर, तुम्हारे अभिधान को जाना। शरणागतरक्षकत्व के बारे में सुनकर तुम्हारे गुण से परिचित हुआ। नीलमेघश्याम लक्षण से तुम्हारे वर्ण को पहचाना। श्रीवत्स, कौस्तुभ आदि चिह्नों को देख तुम्हें पहचाना। शेषाचल पर निवास के कारण तुम्हारे गोत्र को जाना। पुरुषोत्तम नाम से ख्यात होने के कारण तुम्हारे पौरुष को समझा। वेणुनाद विनोदी हो, इस कारण तुम्हारे वंश को जाना। मत्स्य, कूर्म, वराह, नारसिंह, वामन आदि अवतारों के बारे में सुनकर, तुम्हारे जन्म के बारे में समझा। तुम्हारे चरणों का स्पर्श करेंगे। सब में तुम्हें श्रेष्ठ मानकर, तुम्हारी आराधना की है। अब तुम्हारी महिमाओं का गुणगान करेंगे हे वेंकटेश्वर !

-4-

हे क्षीराब्धिशयन ! ज़िस प्रकार कमल सूर्य की प्रतीक्षा करता है, उसी प्रकार मेरा हृदय भी रवि-मंडल-मध्यवर्ती तुम्हारे लिए प्रतीक्षा कर

रहा है। जिस प्रकार कुमुद चंद्रोदय की अपेक्षा करते हैं, उसी प्रकार मेरे नेत्रोत्पल आपके मुख-चन्द्र-दर्शन की अपेक्षा कर रहे हैं। जिस प्रकार मयूर मेघागमन से प्रसन्न हो जाते हैं, उसी प्रकार मेरा मनमयूर नीलमेघवर्ण वाले तुम्हारे शोभामय शरीर की कल्पना कर पुलकित हो रहा है। जिस प्रकार सीपी स्वाति सीकरों के लिए मुंह खोले रहते हैं, मेरी वदन-शुक्ति आपके चरणोदक के लिए विकसित हो रही है। जिस प्रकार सर्प संगीत सुन परवश हो, फन फैलाकर नाचते हैं, उसी प्रकार मेरे श्रवण आपकी कथाएँ ग्रहण कर रहे हैं। तुम परात्पर मूर्ति वाले हो। मैं प्राकृत शरीरधारो पामर हूँ। तब यह मत पूछो कि दोनों में समन्वय - संबंध कैसे संभव होगा ? इस प्रकृति में तुम चैतन्यस्वरूप हो, इस संबंध का परिज्ञान कराते ही, इस हृदय में अनुराग उत्पन्न हो गया है। लोग कहते हैं कि आंख के न पहचाने पर भी, पेट पहचान लेता है। हमारी सामर्थ्य ही क्या जो तुम को जान सकें। इतना ही है कि मैंने अपनी अभिलाषा व्यक्त की है। यह तुम्हें सताने के लिए नहीं है हे वेंकटेश्वर !

-5-

हे दामोदर ! समस्त तीर्थ तुम्हारी पुष्करिणी में हैं, यह सोच पुष्करिणी में डुबकियां लगाईं। समस्त श्रीपतियों की मूर्तियों की, आपके विग्रह में ही आराधना की है। आप की सेवा में एक सिक्का समर्पित करने से ही समस्त दानों का फल प्राप्त हुआ। विहित यज्ञ आदि कर्मों को आपकी सेवा में ही संपन्न किया। समस्त जपों को आपके नाम मंत्र में ही प्राप्त किया। आप के संकीर्तन में ही समस्त वेदों का पाठ किया। वैष्णव आचारों के पालन से सभी तप प्राप्त हुए। अब किसी प्रकार की कमी नहीं

है। मेरे हृदय-कमल में तुम स्थित हो। मेरे मन की परीक्षा करने की कभी आवश्यकता नहीं है। खरे सोने में कोई खोट नहीं होगी। भांडागार में जमा हिसाब के बारे में दूसरों से चुगली खाने को आवश्यकता नहीं है। इस प्रकार तुम्हारी सुमुद्रा के धारण किए रहने से, किसी प्रकार के दोष मुझे छू न सकें, ऐसा करके, मेरी रक्षा करो न वेंकटेश्वर !

-6-

हे हृषीकेश ! अनेक जन्म धारण कर, थक कर, पूर्वजन्म-स्मरण से युक्त होकर, इस जन्म में तो तुम्हारी सेवा करने के विचार से किया गया प्रयास नहीं है। साज-सज्जा के लिए ललाट पर तिरुमणि (ऊर्ध्वपुंड्र) लगाई है। अपना बडप्पन दिखाने के लिए तुम्हारे संकीर्तन सीखे हैं। इस प्रकार मेरे किसी प्रयत्न के कारण से नहीं, घुणाक्षर-न्याय के अनुसार मेरे सब कार्य तुम्हारी सेवा के उपयुक्त बन पड़े। तुम सुन्दरमूर्तिवाले हो, इसलिए तुम्हारी प्रतिमा को अपने घर में स्थापित कर, अपने उल्लास के देवता के रूप में अर्चनाएँ कीं। मुझपर दया करके, अकारण-बंधु बनकर, एक न एक उपाय से मुझे तारने के लिए तुम पर भक्ति उपजाई। इसीमें मेरे जडत्व को और अपने सर्वज्ञत्व को दरसाया तुम ने। साधु-साधु हे वेंकटेश्वर !

-7-

हे कमलनाभ ! मोक्ष को चाहनेवालों के लिए तुम्हारा निरंतर-ध्यान साधन है। इस प्रकार के ध्यान के लिए निर्मल-मन कारण है। निर्मल मन के लिए पंचेद्रिय-निग्रह साधन है। पंचेंद्रिय निग्रह के लिए

शरीर-शोषणकारी तप साधन है। तप के लिए बाह्य-प्रपंच से विरत कर देने वाला वैराग्य साधन है। वैराग्य के लिए निस्संगत्व साधन है। इतने साधन इस कलियुग में किसे प्राप्त होंगे ? तुम्हारी शरण में आकर, तुम्हारे नामों का स्मरण करने से तुम्हीं दया करोगे न हे श्रीवेंकटेश्वर !

-8-

हे गोविंद ! जनमते ही उन-उन जातियों के पक्षियों को उन-उन प्रकार के कुहूरव सिखानेवाला कौन है ? जन्तुओं का माता के गर्भ से निकलते ही माताओं के स्तन्य-पान करना किसके कारण संभव हुआ ? पशुओं का चारा खाने की रीति किसके कारण सिद्ध हुई ? नानाविध वृक्षों का अंकुरित होकर, अपने-अपने आकारों से और पुष्पदलों से युक्त हो, तत्-तत् काल विलसित होना कैसे संभव हुआ ? ये सब तुम्हारे आदेश रूपी सहज भाव हैं। हम भी इसी प्रकार तुम्हारे द्वारा कल्पित देहों को धारण कर रहे हैं। हमारे किए अपराध, हमारे स्वभाव, हमारे सांसारिक-कृत्य - ये सब तुम्हारे प्रभाव के कारण ही हैं। हमें दोषी ठहराने की कोई आवश्यकता नहीं है हे श्रीवेंकटेश्वर !

-9-

हे परमात्मन् ! कहते हैं, श्रीचरणों में प्रपन्न, आजीवन तुम्हारी लीला-विभूति में अभिव्यक्त तुम्हारे कल्याण-गुणों की अनुभूति प्राप्त कर, भूमि (पृथ्वी) को पावन करते हुए जीवन-यापन कर, **अर्चिरादि-गमन** से परमपद को प्राप्त करते समय, नाभि से भूरि प्रणवनाद के मुखरित होने पर, तुम से ऐक्य होकर, तुम्हारी सेवा करते हुए, हृदय-गुफा से निकलकर,

वाक् आदि इन्द्रियों को मन से जोड़कर, मन को प्राण से लगाकर, प्राणों को जीव से मिलाकर, अपने को तन्मात्राओं से लगाकर, उस जीव-प्रकृति को तुम में स्थिर कर, तुम्हारे आधार से सुषुम्ना नाडी को बेध कर, मूर्धन्यनाडी को ब्रह्मरंध्र से सूर्यकिरणों के साथ निर्गमन कर, अग्नि, अहस् शुक्लपक्ष उदगुशयन, शब्द आदि अभिमानी देवता कहलाने वाले आतिवाहिकागणों के एक दूसरे के हाथ सौंपने पर, वायु में प्रवेश कर, सूर्यमंडल में पैठकर, चंद्रमंडल में प्रवेशकर, प्रकाशमान विद्युत्-पुरुष की सहायता से, वरुण-इंद्र-ब्रह्मलोकों को पारकर, सुवर्ण-ब्रह्मांड-कटाह को बेधकर, पृथ्वी-अप्-तेज-वायु-आकाश-अहंकार-महत् नामक सात आवरणों को पार कर, मूल प्रकृति को पार कर, विरजा नदी को पार कर, तेजोराशि ब्रह्म हो तुम्हारे स्वरूप में प्रवेश करता है। कितनी अनोखी कथा सुनी है, हमने वाह-वाह हे श्रीवेंकटेश्वर !

-10-

हे मुरहरि ! आर्तजनों के लिए तुम अभयंकर हो। संसार-सर्प-दष्ट लोगों की रक्षा करने वाले तुम गरुडध्वंज वाले हो। अज्ञान-तिमिर में फंसे लोगों के लिए तुम सूर्यनारायण हो। पाप रूपी मकर के चंगुल में फँस गए लोगों की यातनाओं को दूर करने के लिए तुम चक्रायुध-धारी हो। दारिद्र्यरूपी दावानल को शांत करने के लिए तुम गंगाजनक हो। देवताओं के लिए कल्पवृक्षसम अश्वत्थनारायण हो। योगीश्वरों के लिए चिंतामणि रूपी कोस्तुभवक्ष वाले हो। भक्त जनों के संरक्षक लक्ष्मीनाथ हो। तुम्हारे प्रताप का वर्णन करें कैसे ? तुम्हारे कल्याण गुणों को कहां तक गिनें ? तुम्हारी महिमाओं को कहां तक जानें ? हम अपनी शक्ति के अनुरूप थोडा-बहुत सोच सकते हैं। इस पर ध्यान दो हे श्री वेंकटेश्वर !

-11-

हे गरुडध्वज ब्रह्म ! तुम्हारे प्रभाव के बारे में क्या कहूँ ? तुम्हारे नाभिकमल से जन्मे ब्रह्मा भी तुम्हारी महिमाओं को जानने में समर्थ नहीं हैं। सुना, नाना वेद तुम्हारी महिमाओं को बताते हैं। पर वे भी तुम्हारी मूर्ति के रेणु-भर भी नहीं जानते। सुना, रवि और चंद्र तुम्हारे नयन हैं। पर वे भी तुम्हारी अपार तेजोमहिमा को नहीं जानते। सुना, इंद्र आदि देवता तुम्हारी आज्ञा को सिर आंखों धारण करते हैं। कभी-कभी तुम से रुष्ट होकर, तुम्हारा सामना करने से हार कर, तुम्हारी शरण में आते हैं। सुना, पंचमहाभूत तुम्हारी प्रकृति के गुण हैं। लेकिन वे भी तुम्हारे स्वभाव के बारे में बता नहीं सकते। समुद्र तुम्हारी शय्या है पर वह भी तुम्हारे गुणों की गंभीरता समझ नहीं पाता। सुना, मुनिजन तुम्हारे स्वरूप के सूचक हैं। पर वे भी तुम्हारी माया को तर नहीं सकते। सुना, यह चराचर जगत् तुम्हारी सृष्टि है। पर वह भी तुम को दिखाकर, वर्णन नहीं कर सकता। मेरी शक्ति और मेरी बिसात ही कितनी? मैं तो तुम्हारे श्रीचरणों को ही अपनी गति समझकर पड़ा हूँ। तुम्हीं दया दिखा दोगे न, हे श्री वेंकटेश्वर !

-12-

हे गोपिकावल्लभ ! मेरे सोचने पर प्राप्त होने वाले कल्याण, मेरे खोजने पर मिलने वाले पदार्थ, मेरे चाहने पर मिलने वाला लाभ, मेरे पढ़ने पर समझ में आने वाला अर्थ, मेरे कमाने पर प्राप्त धन, अपने कौशल से संप्राप्त होने वाला सुख, मेरा किया सुकृत, मेरे तपोबल से प्राप्त होने वाले लोक, मेरे पुराकृत फल, मेरा मनोरथ - सब तुम्हीं हो।

मेरे ललाट पर ब्रह्मा की लिखी रेखा, मेरे जन्म का कारण, मेरे अंतरंग में स्थित मूर्ति तुम्हीं हो। मैंने अपनी सामर्थ्य का निवेदन किया है हे श्रीवेंकटेश्वर !

-13-

हे पीतांबरधारी ! तुम्हारा सालोक्य मुझे भूलोक में ही संप्राप्त हुआ है। सामीप्य तो हृदय-कमल में ही प्राप्त है। सारूप्य तुम्हारे ध्यान में स्थिर बना हुआ है। सायुज्य निद्रा-समय में होता है। तुम ने कहा कि मेरी शरण में आने से पापों से विमुक्त कर दूँगा। अतः मुझे जीवन्मुक्ति प्राप्त हुई है। तुम्हारे मुझसे विलग न होने के कारण सदा मुझे आनंदानुभव हुआ। तुम पर भक्ति होने से जन्म शुद्ध हुआ है। जिह्वा को नामामृत प्रदान करने से अमृत-पान का फल प्राप्त हुआ और तुम्हारे दासों के सांगत्य से योग का अभ्यास हो गया। अब तुम से मांगने के लिए रखा ही क्या है ? सब में मैं कृतार्थ हो गया हूँ हे श्रीवेंकटेश्वर !

-14-

हे शार्ङ्गायुधधारी ! तुम्हारा भजन कर, कुछ मांगना चाहूँ तो तुम्हीं बताओ, तुम से बढकर उत्तम वस्तु कहां है ? तुम में ही मूर्ति-त्रय, द्वादश आदित्य, एकादश रुद्र, नव ब्रह्मा, उनचास मरुत्, वसु, दिक्पालक, मुनि-सिद्ध-गंधर्व, अणिमा आदि अष्टैश्वर्य, चतुर्दशभुवन, कुलाचल-दिग्गज-महानाग, सिंधु-गंगा आदि तीर्थ, समस्त साम्राज्य स्थित हैं। परमपद हैं। जहाँ तुम हो, वहाँ सब कुछ है। आत्मा से तुम्हारा स्मरण करने से मुझे सकल सुख प्राप्त हैं हे श्री वेंकटेश्वर !

-15-

हे नीलमेघश्याम ! तुम अणुओं में अणु हो, महत् में महनीय हो, प्रकृति और पुरुष के लिए परमात्मा हो, तीनों मूर्तियों के लिए मूल हो, चराचर के लिए साक्षी हो। सोचकर देखने पर तुम ही देव हो, गिनकर देखें तो अनंत हो, विचार करने पर अभेद्यतत्पद हो, सोचने पर निर्गुण हो, सुनने लगने पर कल्याण-गुण वाले हो, आँखों से देखने पर साकार हो, स्वरूपव्याप्ति से निरवद्य हो, स्वातंत्र्य के कारण जीव-चैतन्य हो, भक्त जनों के लिए प्रपन्न हो, अंत में सोचने पर जगत्कर्ता हो। ऐसे तुम्हें पहचाना कैसे जा सकता है ? अनेक रूपों से युक्त हो, अनेक नाम वाले हो, वेदवादियों के लिए अगोचर हो। चाहकर तुम्हारी सेवा नहीं कर सकते। तुम्हीं करुणा दिखाकर रक्षा करो न हे श्री वेंकटेश्वर !

-16-

हे पुष्करिणी-निवासी ! विरजानदी तक न छूटने वाले प्राकृत शरीरों को ढोने वाले जीव अपनी सामर्थ्य से जीवन्मुक्त कैसे हो सकते हैं ? प्रकृति-संबंध से आई हुई इन्द्रियों को कैसे जीता जा सकता है ? उसके लिए कारणभूत मन को निर्मल कैसे रखा जाए ? उसके कारण कृतकर्म शांत कैसे होंगे ? जैसा भी होने दो, भयभीत होने की क्या आवश्यकता है ? इन सब के लिए कारणभूत हो। नानाविध रीतियों में प्रवर्तित होने वाली अपनी माया को तुम्हारी सेवा करने वालों पर से तुम्हीं उपसंहृत कर सकते हो। चाबी के हाथ में रहने पर, किवाड़ों से धक्का-मुक्की करने की क्या आवश्यकता है ? यह जानकर ही पूर्व के कुछ लोग तुम्हारे दास

बनकर, तुम्हारी स्तुति कर, तुम्हारी शरण में आकर, महात्मा बन गए हैं। हम ने भी उस उपाय को जान लिया है हे श्री वेंकटेश्वर !

-17-

हे अप्रमेय ! संसार में अनेक मायोपायों के होने पर भी वे तुम्हारे दास्य की बराबरी नहीं कर सकते। बहुविध पुण्य-कार्य कर सकते हैं, लेकिन वे तुम भगवान को जानने के विज्ञान के समान नहीं हो सकते। कई प्रकार के योगाभ्यास कर सकते हैं लेकिन वे तुम्हारी भक्ति की समता नहीं कर सकते। कुछ लोगों में बडप्पन (बडे गुण) हो सकते हैं लेकिन तुम्हारी शरणागति-धर्म के बराबर नहीं हो सकते। अनेक प्रकार के शब्द विलसित हो रहे हैं किन्तु वे तुम्हारे तिरुमंत्र-स्तव के बराबर फल नहीं दे सकते। ये सब मैं जानता हूँ। और भी, नाना प्रकार की विद्याएँ तुम्हारी संकीर्तन विद्या के बराबर नहीं हो सकतीं। तैंतीस करोड देवता गर्व से झूल सकते हैं, लेकिन तुम्हारे समान बलवान नहीं हो सकते। तुम्हारे प्रदत्त वरों की कोई हानि नहीं है। तुम्हारी सेवा करने वालों के पद ध्रुवपद के समान हैं। यह तो लोक-दृष्टांत हैं। तुम्हारे चरित्र तो अगणित हैं। दूसरे मार्ग तो मृगतृष्णाओं में जल के समान हैं, जुगुनुओं के प्रकाश के समान हैं, अभ्रक के बने आभरणों के समान हैं, सीपियों की चांदी के बराबर हैं। इन भ्रमों में न फंसकर, तुम्हारे श्री चरणों को ही गति मानकर रहने वाले जीव धन्य हैं हे श्री वेंकटेश्वर !

-18-

हे नारायण ! जन्मों को हेयमूल कहकर व्यर्थ ही घृणा प्रकट करते हैं

किन्तु यह नहीं जानते कि वे किसी के अपकारक नहीं हैं। कर्मों को फलप्रद समझकर कर रहे हैं पर वे हम से समन्वित नहीं हो रहे हैं। संसार-भार से यों ही डरते हैं परन्तु वह किसी को असह्य नहीं लगता। मोक्ष उत्तम है, ऐसा सोचकर, उसको ढूँढते हैं, परन्तु पूर्व में कभी उसका अनुभव नहीं किया है। तुम्हें सर्वेश्वर कहते सुन, प्रणाम कर रहे हैं किन्तु यह नहीं जानते कि तुम कितने समर्थ हो। क्या-क्या कहकर निवेदन करूँ ? मेरा ज्ञान ही कितना ? पूर्व जन्म में मुझ पर कुछ कृपा की थी, इस जन्म में तुम्हारा दास बन, जन्म ले सका हे श्री वेंकटेश्वर !

-19-

हे सकल लोकाराध्य ! तुम तो सब जगह रहने वाले हो, हम कहीं भी घूमते रहें, तुम्हारे सान्निध्य में ही हैं। तुमतो सकल लोकनाथ हो, इसलिए हम किसी की भी सेवा करें, वह तुम्हारी ही सेवा होगी। आंखों के समक्ष जो भी रूप हैं, वे सब तुम्हारे हैं, इसलिए हम तो सदा तुम्हारी अर्चना करने वाले हैं। तुम हमसे कभी अलग नहीं रहते हो, इसलिए कि हम सदा तुम्हारा स्मरण करने वाले ही हैं। हम जो भी आहार ग्रहण करते हैं, वह सब तुम्हारा दिया हुआ है, इसलिए सदा तुम्हारा प्रसाद ग्रहण करने वाले हैं। मेरे किए जाने वाले कृषि-गोरक्षण-वाणिज्य आदि तुम्हारी लीलाओं के लिए उपयोगी हैं, इसलिए वे सब तुम्हारी पूजा के रूप हैं। तुम मुझे जन्म देने वाले हो, इसलिए यह सब कुछ तुम से ही संपन्न होने वाला है। इस तात्पर्य को भूले बगैर हमारी रक्षा करो न। मैं सदा सूत्र के अनुसार नाचने वाला कठपुतली हूँ। मेरे एक निवेदन को दस हजार निवेदन मानकर, मुझपर करुणा दिखाओ न हे श्री वेंकटेश्वर !

-20-

हे हयग्रीव ! केशव, नारायण, माधव, गोविंद, विष्णु, मधुसूदन, त्रिविक्रम, वामन, श्रीधर, हृषीकेश, पद्मनाभ, दामोदर, संकर्षण, वासुदेव, प्रद्युम्न, अनिरुद्ध, पुरुषोत्तम, अधोक्षज, नारसिंह, अच्युत, जनार्दन, उपेन्द्र, हरि, श्रीकृष्ण-ये चौबीस नाम पापहरण करने वाले हैं, पुण्यों के आकर हैं। स्तुति करने वाले के वाग्विभूषण हैं। चाहने वालों के लिए मन चाहे सुवर्ण के ढेर हैं। ज्ञानियों के लिए सिद्धमंत्र हैं। इह और पर के लिए (ऐहिक और पारलौकिक) ये नाम कामधेनु, कल्पवृक्ष और चिंतामणि हैं हे श्री वेंकटेश्वर !

-21-

हे प्रह्लादवरद ! बदरिकाश्रम, नैमिशारण्य, सालग्राम पर्वत, अयोध्या, प्रयाग, द्वारावती, पुरुषोत्तम, सिंहाचल, श्रीकूर्म, अहोबल, सेतु, कुंभकोण, ताम्रपर्णी, श्रीरंग, कांची, नारायणगिरि आदि पुण्यक्षेत्रों और तुम्हारे एक सौ आठ तिरुपतियों की सेवा का फल, तुम्हारे दासों को देखकर एक बार नमस्कार करने मात्र से प्रदान कर देते हो। चार वेद, छः शास्त्र, अष्टादश पुराणों के पठन का पुण्य, एक बार "नारायण" कहने पर प्रदान कर देते हो। अग्निष्टोम, आतिरात्र, वाजपेय, द्वादशाह, पौंडरीक आदि यज्ञ करने का सुकृत, तुम्हारे श्री चरणों पर एक तुलसीदल रखने से प्रदान करते हो। तुलाभार, हिरण्यगर्भ आदि दान करने का फल, मात्र तुम्हारा "दास" कहलाने पर प्रदान करते हो। तुम भक्ति से सुलभ हो, अतः तुम्हारे शरणार्थियों (शरण में आने वालों) को कोई कठिनाई नहीं होती है हे श्री वेंकटेश्वर !

-22-

हे श्री जनार्दन ! हे श्री-भूमि (भूदेवी) और नीला समेत स्वामी ! हे शंख-चक्र-गदा-खड्ग-शारङ्गक आयुध धारण करने वाले ! हे चतुर्भुज ! श्री कौस्तुभमणि और श्रीवत्स से शोभित वक्ष वाले ! हे पीतांबरधारी। मणिकिरीट, मकर-कुंडल आदि आभरण वाले ! वैजयंती - वनमाला से अलंकृत रहने वाले ! हे पुंडरीकाक्ष ! अनेक बाहु-उदर-शिर- पाणि-पाद-उरु-जंघा आदि अवयव वाले ! विश्वरूप ! अनंत-गरुड-विष्वक्सेन आदि के नायक ! सनक-सनंदन-सनत्कुमार-सनत्सुजात से संलाप करने वाले ! नारद-ग़ान से प्रसन्न रहने वाले ! नीलमेघ-श्यामल ! चतुरानन के जन्मस्थान नाभि-सरोज वाले ! गंगानदीके कारणभूत श्री चरणपद्मवाले! हे भक्तवत्सल ! हे वेदोद्धारक ! वैकुंठ-पुरवर के अधीश्वर ! असुरों को दंडित करने वाले ! अमरों की रक्षा करने वाले ! हे जगन्निवास ! जय ! जय ! तुम्हें अनंत नमस्कार करता हूँ। अवधारण करो (ध्यान दो) हे श्री वेंकटेश्वर !

-23-

हे गजेंद्रवरद ! यह सोचकर कि तुम हमारे साथ हो, दूसरों को आसीसता हूँ, लेकिन उनकी **इच्छाओं की पूर्ति** की सामर्थ्य मुझमें नहीं है। (करने में समर्थ नहीं हूँ।) यह सोचकर कि तुम मुझमें प्रविष्ट हो, दूसरों से प्रणाम करवा लेता हूँ, किन्तु अपने राजस (अहंकार) के कारण नहीं। तुम्हारे दास होने के कारण, बड़े लोगों की संगति में विचर रहा हूँ लेकिन अपने तपोमहत्व से उत्पन्न अहंकार के कारण नहीं। तुम ने मनुष्य-

योनि प्रदान की, इसलिए इस संसार में आया हूँ, अपनी स्वतन्त्रता के कारण नहीं। मैं कितना भी, कितने प्रकार से जड बना रहूँ, तब भी मुझे छोड़ देना क्या तुम्हारे लिए समुचित है ? नहीं है न, हे श्री वेंकटेश्वर !

-24-

हे प्रद्युम्न ! मन से तुम्हारे चरणों का स्मरण करूंगा, वाणी से स्तुति करूंगा, अपने चरणों से तुम्हारी परिक्रमा कर, हाथ जोड़कर नमस्कार करूंगा, ये ही मुझसे हो सकने वाले उपाय हैं। अनेक विधानों का विस्तार कर, कर्म कर, आप को प्रसन्न बनाने की शक्ति से विहीन हूँ। आपके अनुग्रह को प्राप्त करने के लिए अति घोर तप कर, आप को प्रसन्न कर, वर मांग नहीं सकता। उद्धव के समान गोपियों और आपके बीच प्रेम की बातें कर, आपको अभिमुख (प्रसन्न) करने की सामर्थ्य से रहित हूँ। सुग्रीव के समान सेनाएँ बटोरकर, आपकी आवश्यकता के अनुरूप सेवाएँ करने के लिए बलवान नहीं हूँ । यही मेरा पुरुषार्थ (सामर्थ्य) है। मुझे देख "यह कहाँ से पीछे पड़ गया" ऐसा सोचकर चिंता मत कीजिए। लेटने वाले के लिए भूमि आधार है, नदियों के लिए सागर ही गति है, पक्षियों के लिए वृक्ष ही निवास-स्थान हैं। जैसे फसलों के लिए वर्षा ही जीवनाधार है, वैसे ही मेरे लिए आप ही हैं हे श्री वेंकटेश्वर !

-25-

हे संकर्षण ! तुम अपनी माया-मात्र से मानवों के लिए दारु-लोह-पाषाण-मृत्तिका के रूप को धारण कर, मंदिरों में तथा घरों में पूजाएँ प्राप्त

करते हुए, उनको मन चाहे वर दे रहे हो। कुछ भी नहीं जानने वाले अज्ञानियों के लिए भी तुम कितने सुलभ-साध्य हो ! शायद तुम्हारे वितरण-गुण ने तुम्हें ऐसा बनाया होगा। इस प्रकार करुणा दिखाना शायद तुम्हारा व्रत (नियम) है। शायद वह तुम्हारा स्वभाव का गुण है। दीनों की रक्षा करना तुम्हारी कीर्ति है। वाह वाह। तुम्हारा महत्व विरल है, विरल। तुम्हारे चरित्र को सुनकर आश्चर्य होता है। साधु साधु, जो हो, मेरे जन्म सफल हो गए हैं, मेरी इच्छाएँ पूरी हो गई हैं, मेरा संतोष परिपूर्ण हो गया है हे श्रीवेंकटेश्वर !

-26-

हे दानवारि (राक्षसों के शत्रु) ! पूर्व में मैं तुम्हारे उत्तम गुणों को नहीं जानता था। मुझपर ध्यान देकर, बड़े लोग मुझे निष्ठावान कहेंगे, इस अभिमान ने मुझे सात्विक बनाया। दूसरे लोग कहीं मुझे न सताएँ, इस भय ने मुझे शांत गुण वाला बनाया। कामिनियाँ कहीं धन का अपहरण न करें, धन के प्रति इस लोभ ने मुझे जितेंद्रिय बनाया। यातनाएँ सहकर, धन कमाने से थक जाने के भाव ने मुझे विरक्त बनाया। नरक की भीति का निवारण करने के लिए तुम्हारे प्रति भक्ति उत्पन्न कर, तुम्हारी शरण में आने के लिए बाध्य किया। इस प्रकार अनादिकाल से संसारिकता के प्रति आसक्त रहने वाले मुझे एक-एक उपाय से अपनी ओर आकर्षित कर लिया। अब तुम्हारी प्रार्थना कर, करने योग्य निवेदन ही क्या है ? तुम्हारे दैवी प्रयत्न के समक्ष अपने मानुषी प्रयत्नों के कारण लज्जित हूँ। बाप रे ! तुम्हारी स्तुति करके तुम्हें दे ही क्या सकेंगे ? तुम्हारा स्तवन करना ही हमारे लिए बहुत कुछ है, हे श्री वेंकटेश्वर !

-27-

हे पुरुषोत्तम ! वेद रत्नाकरों (समुद्र) के समान हैं। वे अपने भीतर के अर्थों को बहिर्गत होने नहीं देते। पुराण सधे हुए शिकारियों के समान हैं। नाना अर्थों को प्रकट कर भ्रम में डाल देते हैं पर किसी एक तत्त्व का निश्चय करने नहीं देते। भाट्ट, प्राभाकरादि शास्त्र परस्पर शत्रुओं के समान हैं, एक दूसरे के प्रति द्वेष भाव रखते हैं पर तुम पर भक्ति भाव नहीं सिखाते। दान इंद्रजाल के समान है, एक के सोलह बनाकर उपभोग कराते हैं किन्तु मुक्ति के मार्ग को नही बताते। अन्य कर्म खेत की फसलों के समान हैं, जन्म-परम्परा के कारण बनकर, एक शरीर के बाद दूसरा शरीर देते हैं परन्तु वैराग्य को अंकुरित होने नहीं देते। ये इन की सीमाएँ हैं। अब संशय का निवारण कौन करेगा ? जिसने निक्षिप्त किया, उसीको वह स्थान बताना होगा। तुम सर्वज्ञ हो, मुझे सही अर्थ समझा दो न हे श्री वेंकटेश्वर !

-28-

हे परमपुरुष ! मेरे पीठ पीछे, पता नहीं कोई मुझे दुर्जन बताए, इसीलिए अभी अपने अपराधों को मैं ही बता दूँगा। दीनता से याचना कर बच जाऊँगा। बता दूँ वह कैसे ? मेरे किए पाप यदि मुझे घेर लें तो तुम्हारा नामोच्चारण कर बच जाऊँगा। यदि तुम से कल्पित (सृजित) विषय मुझे सताने आएँ तो मन में तुम्हारे चरणों का स्मरण कर, तुम्हारी आड में छिप जाऊँगा। पुराकृत कर्म यदि कहें कि भोगना ही पड़ेगा तो मैं तुम्हारा आश्रित होकर, उन्हें बलपूर्वक ढकेल दूँगा। यदि यमकिंकर मेरे

पास आएँ तो भुजाओं पर अंकित शंख-चक्र के चिह्न बताकर, उन्हें डरा दूँगा। यदि संसार-पाश मुझे फंसाना चाहें तो तुम्हारी कथाएँ सुनाकर, बच जाऊँगा। यदि तुम्हारी माया मुझे डुबो देना चाहे तो तुम्हारे दासों से निवेदन कर, तुम से शिकायत करा दूँगा। मेरे अपराधों को मन में मत रखो न हे श्री वेंकटेश्वर !

-29-

हे स्वामी। यदि तुम बचाना चाहोगे तो ब्रह्मा का शाप क्या बिगाड़ सकेगा ? ध्रुव को तुम ने चिरंजीव बना दिया। ब्रह्मास्त्र क्या कर सका? परीक्षित को जीवित कर दिया। ब्रह्मा की माया क्या कर सकी ? गोवत्स और गोपबालकों की पुनः सृष्टि की (पुनर्जीवित किया)। मृत्यु क्या कर सकी ? सांदीपनि के बालकों को ला दिया। पाप उनका क्या बिगाड़ सका ? अजामिल का उद्धार किया। सब जगह तुम्हारा बलशाली होना, तुम्हारी करतूत से दिखाई पड़ा। अपने दासों को सभी प्रकार के भयों से रक्षा करते रहते हो। तुम्हारे प्रताप का किन शब्दों में वर्णन करूँ हे श्री वेंकटेश्वर !

-30-

हे पुंडरीकाक्ष। इंद्र आदि देवताओं के पशु-पुरोडाश बनने के कारण, अज्ञानी जानवर बकरे, अपने रखवारे ग्वाले के साथ, सुनते हैं, स्वर्ग आदि सुखों को भोगते हैं। राज्य-लोभ के कारण क्रोध को बढ़ाकर, रणरंग में परस्पर हिंसारत वीर पुरुष, सुनते हैं, सूर्यमंडल को बेधकर दिव्यपदों को भोगते हैं। कामातुर नारियाँ (साध्वियाँ) पतियों से बिछुड

4

न सके, उनके कलेवरों से लिपटकर, अनल में प्रवेश कर, सुनते हैं, उत्तम गतियों को प्राप्त करती हैं। सम्यक ज्ञान से संपन्न होकर तुम्हारे दास बनकर, तुम्हारे चिह्न—शंख-चक्र की तप्त मुद्राएँ धारण कर, परिशुद्ध बनकर, काम-क्रोध रूपी पशुओं को ज्ञानाग्नि में होम कर, तुलसीदल युक्त तुम्हारे श्रीपाद-तीर्थ रूपी सोमपान से, पापों को दूर कर, तुम्हारे प्रसाद रूपी पुरोडाश का सेवन कर, आचार्योक्ति (गुरुमंत्र) के रूप में तुम्हारे तिरुमंत्र का पाठ कर, तुम्हें प्रसन्न करते हुए, श्वेत-मृत्तिका-श्री चूर्ण का (ललाट पर) धारण कर, पद्माक्ष - तुलसी मालिकाओं को धारण कर, तुम पर मन लगाकर, नित्य तुम्हारी पूजा रूपी यज्ञ करने वाले वैष्णवोत्तमों के सौभाग्य का किन शब्दों में वर्णन करूँ हे श्री वेंकटेश्वर !

-31-

हे पद्मनाभ ! तुम्हें प्रणाम करने के लिए उठाये करद्वय कलई का कंगन है, तुम्हारे चिह्न तिरुमणि-द्वय मंगलसूत्र है, अन्य सब छोड़कर तुम्हारी ही अर्चना करना पातिव्रत्य-धर्म है, तुम्हारे दासों के साथ विचरना कुलाचार नियम है, तुम पर भक्ति-निष्ठा से रहना धरोहर के धन को प्राप्त करना है, तुम्हारा दास्य ही मान है, तुम्हें (सब कुछ) समर्पित करना तुम्हारे साथ गृहस्थी निभाना है, तुम्हारी मूर्ति की सेवा करना सदानुभव (सत्+अनुभव) है, तुम्हारी मुद्राओं को धारण करना ही सौंदर्य है, आचार्यों का उपदेश ही जीवनभर की कमाई है। ऐसा मानकर तुम्हें भजने वाले ही श्री वैष्णव हैं। सुना है, ऐसे लोगों के लिए तुम वरद हो। हम भी उन्हीं में ही हैं, इसका मन में ध्यान रखो न हे श्री वेंकटेश्वर !

-32-

हे कोटिसूर्य प्रकाश वाले ! लीला-विनोद करने के लिए तुम्हारे कमाए द्रव्य लवण-इक्षु-सुरा-दधि-घृत-क्षीर आदि समुद्र बने हुएहैं, कांचन रजत आदि धातुओं के पर्वत बने हुए हैं, समस्त धान्य चाहकर नई फसलों की राशियाँ बनी हुई हैं, पद्मराग - वैडूर्य - रत्न - समूह भूगर्भ में निक्षिप्त हैं, पुण्य नदियाँ तुम्हारे राज्य की सरहदी-नहरें हैं, पुष्प-फल-भरित कानन तुम्हारे श्रृंगार-उपवन हैं, गज-वाजि-रथ-पदाति-समूह पट्टणों में जहाँ भी देखें तुम्हारे ठौर बने हुए हैं, तुम जगदेक-कुटुंबी हो, ऐसे तुम्हें गृहस्त्थी निभाते देखकर लार टपक रहा है। अन्य लोग मोक्ष मांगना क्यों पसंद करेंगे ? वे तुम्हारे साथ गृहस्थी निभाना ही चाहेंगे। इसमें उनका क्या दोष है हे श्री वेंकटेश्वर ?

-33-

हे राजा बलि को बाँध डालने वाले ! देहधारी रागद्वेष का दमन कैसे कर सकेंगे ? कहते हैं, सशरीर स्वर्ग जाकर भी धर्मराज उन्नत पद पर स्थित दुर्योधनादियों को देखकर ईर्ष्यालु हुए। तब हमारी बिसात ही क्या है ? हे देव ! पंचेद्रियों को छोड, प्राणियों को अज्ञान में डुबो देकर, उन्हें भ्रम में डाल देते रहने पर, तुम से विरोध रखकर, उनका दमन कहाँ से कर सकेंगे ? तुम्हारी शरण लेकर, तुम्हारा नाम-संकीर्तन करने पर ही वह संभव होगा। अब तुम्हारी इच्छा और हमारा भाग्य ! जो कुछ भी करो, हम तो तुम्हारी शरण में हैं हे श्री वेंकटेश्वर !

-34-

हे वेदवेद्य ! लोक-व्यापार के अनुसार तुम्हारे नाना जीवों का पोषण करते रहने पर, मैं एक ओर तुम्हारी मूर्ति को अपने मन में सोचकर, स्थापितकर, तुम्हारे साथ खुले तौर पर बातें करते हुए, विविध प्रकारों के मनोरथों की पूर्ति करते हुए, समय बिता रहा हूँ। यह तुम्हारे उद्योग (कामधंधे) में अलसत्व पैदा करना तो नहीं होगा न ? ऐसा नहीं होगा। तुम विश्वतोमुख हो, इसलिए सबसे बातें कर सकते हो। परिपूर्ण हो, इसलिए सब जगह रह सकते हो। इसमें हमारा कोई दोष नहीं है। तुम अनंत शक्तिधर हो। अनेक महिमाओं से युक्त हो। अपरिमित-उदार गुण वाले हो। अतः ऐसे तुम्हारे माहात्म्य की शरण लेते हैं हे श्री वेंकटेश्वर !

-35-

हे देवदेव ! बार-बार तुम्हारा स्मरण करते रहने पर, ऐसा कभी-कभी सोचता हूँ कि कहीं तुम यह न सोचो कि यह क्या मांगना चाहता है। इतना ही नहीं; शरीर को कष्ट पहुंचाकर, तप करने का सोचा तो अंतरात्मा बन बैठे तुमको कष्ट पहुंचेंगे, यह सोचकर चुप रह जाता हूँ। नाम लेकर तुम्हें बुलाऊँ तो संभव है सब काम-धाम छोड़कर आ जाओगे, यह सोचकर मौन धारण कर लेता हूँ। जगत् में तुम परिव्याप्त हो, यह जानकर तुम्हें देखना चाहूँ तो शायद वह तुम्हारी परीक्षा लेने के समान होगा, यह सोचकर, उस पर ध्यान नहीं देता। तुम्हारे चरित्रों के बारे में बार-बार सुनूँ तो शायद तुम्हारे रहस्य प्रकट हो जाऐंगे, यह सोचकर उन्हें सुनता नहीं। तुम्हारे दरबार में आकर, तुम्हारे चरण छूना चाहूँ तो लगता है कि

वह सब मलिन हो जाएगा, यह सोच यहाँ-वहाँ रहकर प्रणाम करता हूँ। यह जानकर, तुम्हीं मुझ पर दया करो न हे श्री वेंकटेश्वर !

-36-

हे वैकुंठनाथ ! हिरण्यगर्भ (ब्रह्मा) आदियों के पिता हो तुम, सनकादियों के शासक हो तुम, दिविजों के रक्षक हो तुम, मुनियों के लिए वरद हो तुम, ज्ञानियों के लिए परदेवता हो तुम, जगों के लिए मूलकारण हो तुम। ऐसे तुम्हें अहीर दंपति यशोदा-नंद ने पुत्र समझ कर पालन-पोषण किया, गोपिकाओं ने पति समझा, पांडवों ने सोचा बहनोई है। उन-उन लोगों ने उस प्रकार के भावों की अनुभूति पाई। इनके अतिरिक्त मुचिकुंद, दधिभांड, कमलाकर, भीष्म आदि ने तुम्हें परतत्व नारायण मानकर, भजन कर, ब्रह्मपद को प्राप्त किया। इन सब प्रकार के लोगों के लिए तुम्हीं एकमात्र लक्ष्य हो। हम जैसा सोचेंगे तुम वैसे ही बन जाओगे। विवेकवान लोगों के लिए तुम परमनिधान हो न हे श्रीवेंकटेश्वर !

-37-

हे सत्यसंकल्प वाले ! जो प्रपन्न हैं, उनके लिए, आपके दासों के श्री चरणोदक को सिर पर धारण करना ही समस्त नदियों में स्नान करने के समान है, त्रिकालों में आचार्य को प्रणाम करना संध्यापाठ है, अभ्यागत श्री वैष्णवों को प्रसन्न करने वाले वचन कहना गायत्रीमंत्र जप है, पूर्वाचार्यों के कहे स्वरूप-ग्रंथानुसंधान ही वेद-पारायण है, ज्ञानाग्नि में काम-क्रोध रूपी समिधाओं का हवन करना ही उपासना है, अर्हता रखने वालों को श्रीवैष्णव-मार्गों का उपदेश देना ही अतिथिसत्कार है। दादा-परदादाओं

के समान रहना ही देव-पितृ-संतर्पण है, आपकी श्री आराधना करना ही समस्त यज्ञों को करना है। वेदोक्त कर्मों के फल इस प्रकार के आचरण से संप्राप्त होते हैं। यही परमार्थ है। आपकी सेवाएँ कर, पाप समूह को जला दे सकते हैं। लेकिन आपका स्पर्श कर क्या आप को प्रसन्न किया जा सकता है ? (यह असंभव है।) हे श्री वेंकटेश्वर !

-38-

हे निगमगोचर ! जब मेरा मन ध्यान-योग में लग्न होना चाहता है तो मन में चंडाल, गार्दभ, सूकर कांताएँ घूम जाती हैं। तब उसे छोड़कर पुराण पढ़ना चाहूँ तो ताडगा, शूर्पनखा, विराध, कबंध, रावण, कुंभकर्ण आदि के नाम मुंह से निकलने लगते हैं। उसे छोड़ जप करना चाहूँ तो निद्रा, जंभाइयाँ, आलस्य आ धमकते हैं। उसे छोड़ कुतूहल से तीर्थ-यात्राएँ करना चाहूँ तो दुष्ट-चोर-व्याघ्र-मकर आदि के भय शरीर को कपित कर देते हैं। इस प्रकार मेरे प्रयत्न सफल कहाँ हो पाएंगे ? मैं एक प्रकार से सोचूँ तो तुम्हारी माया दूसरे प्रकार से भ्रमित कर देती है। किस उपाय से तुम्हें अपने वश में कर सकूँ ? वह उपाय मुझे बता दो न। तुम तो जगद्गुरु हो। मेरा मर्म तो तुम्हारे हाथ में है न हे श्री वेंकटेश्वर !

-39-

हे नगधर ! तरु-लता-पाषाण आदि कतिपय जीव शरीर, नर-पशु-पक्षि-मृगादि कतिपय जीव-जंतुओं के लिए आहार बने हुए हैं। सोचकर देखने पर कौन किसका रिश्तेदार होता है ? (कोई किसी का नहीं।) 'ऋणानुबंध रूपेण' साथ लगे हुए हैं, पुत्र-मित्र-कलत्र-आदि।

ये प्राकृत-सुख के साथी हैं। हे स्वामी ! तुम जगदेक कुटुंबी हो। मोक्षसुख के साथी हैं तुम्हारे दास जो ऐहिक और पारलौकिकता के साधन रूपी बांधव हैं। तुम्हारे नाम सकल दुरितों के निवारक हैं, तुम्हारे आयुध हमारे लिए सर्व-रक्षक हैं, तुम्हारे चरणों पर भक्ति हमारे लिए वज्रपंजर के समान हैं न हे श्री वेंटकेश्वर !

-40-

हे विष्णुस्वरूप। मैं कितना ही मूढ और कठिन-चित्त वाला क्यों न होऊँ, फिरभी यदि तुम मुझपर कृपा भाव दिरवाओगे तो में सात्विक भाव वाला बन जाऊँगा। पूछोगे कि वह कैसे संभव है ? चट्टान पर घडा रख दें तो क्या वह स्थिर नहीं होगा ? सडांध पर जवादि पोत दें तो परिमल व्यापेगा नहीं ? तोते को सिखाएं तो वह सीखेगा नहीं ? जंगली हिरण को शिकार खेलना सिखाएँ तो नहीं सीखेगा क्या ? यह लोक-सहज है। इसलिए माता के अपनी संतान को बुला-बुलाकर खिलाने के समान, मालिक के अपने ढोरों को हांक लाकर, घर पर रख, उनका पालन-पोषण करने के समान, तुम मुझपर दया रख, अपने मन से कृपा दिखाकर, मुझे अपना किंकर बना लो न हे श्री वेंकटेश्वर !

-41-

हे गोवर्धनोद्धारक ! कर-चरण आदि अवयवों को धारण कर, मातृगर्भ से बाहर निकलकर, बड़े होकर, बुद्धिमान बनकर, इस खोज में निकल पड़ा कि इन जगतों के कर्ता कौन हैं। खोज-खोजकर पुराणों से तुम्हारे वैभव के बारे में जानकर, तुम्हें देख पाने में असमर्थ हो, तुम्हारे

बारे में सोचकर तुम्हें जान न सक, तिरुमल पर्वतों को क्रम से पारकर, वेंकटाचल पहुंचकर, गरुडस्तंभ के पास तुम्हें लोगों को वर प्रदान करते हुए देखकर भी, पापविनाशतीर्थ में स्नान करने वालों के पापों के पानी में वह जाते देखकर भी, उस पर्वत पर वृश्चिक-सर्प आदि जीवों के विषरहित रहते देख कर भी, आश्चर्य चकित हुआ। तुम्हारी मूर्ति के दर्शन कर, पूर्व के अज्ञान को छोड़कर, संदेहनिवृत्त होकर, तुम्हीं को रक्षक (शासक) जानकर, अपने को तुम्हारा सेवक मानकर, श्रीवैष्णव बन गया हूँ। मेरी रक्षा करो न हे श्री वेंकटेश्वर !

-42-

हे उपेंद्र ! तुम्हारे मेरे शासक बनकर, मेरे भीतर रहने पर, तुम्हारी और न देखकर, एकांत में घर-गृहस्थी चलाकर, संतानों को जन्म दिया। यही नहीं, तुम जैसे शासक के देखते रहने पर भी, इस भ्रम में रहकर कि कोई मुझे नहीं देख रहा है, अकरणीय पाप किए। और तुम्हारे मेरे साथ रहकर, मेरे रक्षक बने रहने पर भी उस बात को भूलकर, अकेले रहते समय, अपने को अकेला समझकर, संशय-भूतों से भयभीत रहा। तुम्हारे मेरे मन और पंचेंद्रियों में विचरण करते समय, न डरकर आत्मीयता को न गिनकर, पलंग पर सोता रहा। कभी-कभी माता-पिता के समान तुम्हारे आत्मभोगों को प्रदान करते हुए, बाह्य-अंतर को देखते रहते समय, संकोच न कर, मान तज, मलमूत्रों का विसर्जन किया। गिनकर देखोगे तो मेरे अपराध अनंत हैं। सब को सह लो। अपने अपराधों के प्रायश्चित के रूप में प्रणाम करूंगा हे श्री वेंकटेश्वर !

-43-

हे चक्रपाणी ! तुम्हारी मायाओं के वशीभूत होकर, मेरे व्यसनों में फंस जाने पर भी अपना सेवक मानकर छुड़ा लो न। आशापाश यदि मुझे चौतरफ से कस लें तो पुराना दास समझकर, मेरा पक्ष ले लो न। यदि बार-बार काम-क्रोध मुझे जकड़ लेते रहें, तो अपनी मुद्राओं को धारण करने वाला समझकर, बचा लो न। पुराकृत कर्म मेरे पीछे पड़ जाएं तो तुम्हारा संकीर्तन करने वाला मानकर, क्षमाकर, रक्षा कर लो न। बीच-बीच में अज्ञान मुझे फांस ले तो उसे दूरकर, मुझे अपने हाथ का सहारा दे दो। अपने को रोक न पाकर, पहले ही निवेदन कर चुका हूँ। तुम अनाथनाथ हो, आर्त-शरण्य हो, सर्वभूत-दयानिधि हो। निर्हेतुक बंधु हो, तुम मेरे हृदय में निवास करने वाले हो। तुम्हीं मेरे शरण्य हो न हे श्री वेंकटेश्वर !

-44-

हे माधव ! आपने अर्जुन को दर्शन देकर, सात सौ ग्रंथ (श्लोक) वाली भगवद्गीता का उपदेश दिया। विश्वरूप दिखाकर, सप्रमाण आप को जानने का बोध कराया। अब हम जैसे जीवों को किस प्रकार प्रबुद्ध करेंगे, इसी के बारे में सोच रहा हूँ। हाँ, और एक उपाय को सोच लिया है। प्राचीन काल में (पूर्व में) वाल्मीकि ने दो अक्षरों वाले "राम" शब्द का जाप किया और ब्रह्मर्षि बनकर, आपकी कृपा का पात्र बना। नारद भी आपका संकीर्तन कर कृतार्थ हो गया। विभीषण आपकी शरण में आकर जीवित बच गया। मेरे लिए भी यही मार्ग (उपाय) है हे श्री वेंकटेश्वर !

-45-

हे नंदनंदन ! जितने पाप कर सकता था, उतने पाप कर दिए। पता नहीं, मेरा कर्म-भोग क्या होगा। देव-ऋषि-पितृ-तर्पण नहीं किया, नहीं जानता, यमकिंकर क्या करेंगे। असंख्य उद्योग (प्रयत्न) कर रहा हूँ। पता नहीं, विधि क्या कह रहा है। अन्न-पान आदि को भोग रहा हूँ, पता नहीं, चित्रगुप्त क्या लिख रहा है। बाल्य-कौमार्य-यौवन की गतियों से बढ़ रहा हूँ, पता नहीं, काल क्या कह रहा है। इतने अपराधों के शिकार बनने के कारण, अपने भय के निवारण के लिए तुम्हारी शरण में आया हूँ। जो निवेदन कर सकता था, वह सब किया। पता नहीं, तुम्हारा चित्त कैसा है हे श्री वेंकटेश्वर !

-46-

हे आदिदेव ! मैं तो अपने कर्मों को भोगने के लिए भूलोक में पैदा हुआ, यह सोचकर नहीं कि तुम्हें पहचान कर तुम्हारी सेवा कर सकूँ। इतने में तुम ने निर्हेतुक लीला से मुझ पर करुणा दिखाकर, मुझे अपने दास के रूप में स्वीकारा। अपने भाग्य की कैसे स्तुति करूँ ? वह तो तुम्हारी ही प्रशंसा होगी। मैंने क्या तप किया, इसके बारे में क्या विचार करूँ। वह तो तुम्हारी महिमा का विचार करना होगा। अपनी बुद्धि की क्या प्रशंसा करूँ ? वह तुम्हारे संकल्प की प्रशंसा होगी। प्यासा आदमी जब जल ढूँढ रहा था तब मानो उसे भागीरथी जल संप्राप्त हुआ, खेत जोतने वाले किसान को मानो हल की रेखा में सोने के घड़े मिल गए, खेलने के लिए छोटी कंकडों को ढूँढने वाले को मानो माणिक्य मिल गया, उसी प्रकार तुम मुझे प्राप्त हुए हो हे श्री वेंकटेश्वर !

-47-

हे मत्स्यावतारी ! ध्यान दो। मुझमें स्थित पाप रूपी पुरुष के विजृंभित होकर, मेरा पीछा करने पर, मैं तुम्हारी शरण में आया। इतने में तुम्हारा उभयदास-पुरुष आया और वह पाप-पुरुष से भयंकर युद्ध करने लगा। तब अरिषड्वर्ग नामक नक्षत्र टूट गिर पड़े। तापत्रय रूपी गाज गिरी। चिंता-समुद्र विचलित हो गया। निर्दय रूपी धरती कांप उठी। दुर्गुण रूपी दिशाएँ विचलित हुईं। दुराशा के पर्वत ढह गए। इस अति घोर-समर में पाप-पुरुष हार कर भाग गया, आपका उभयदास-पुरुष जीत गया। यह शुभ समाचार आपको बता दिया हे श्री वेंकटेश्वर !

-48-

हे कमलनाभ ! मैं तुम्हारा गुप्तचर हों, निवेदन करने आया हूँ, एकांत में ध्यान से सुन लो। पृथ्वी पर शरीर नामक माया-पट्टण है। उसका राजा अहंकार है, चंचलता प्रधान मंत्री है, विषय करि (गज) और तुरंग हैं, पाप इनके सैनिक हैं, इच्छाएँ पहरेदार हैं, रतिसुख नामक धन-धान्य भांडागार हैं। इस प्रकार दुर्ग में रहने वाले लोग आशा रूपी निशासमय में अपने आप को भूलकर सोते रहते हैं। तुम यदि अपने सेनापति ज्ञान को, बुद्धि-वैराग्य-शम-दम नामक सेना के साथ मेरे पास भेजोगे तो उस दुर्ग को वश में कर, वहाँ रहकर, समस्त शत्रुओं को पकड़ लाकर तुम्हारे हाथ सौंप दूँगा। इसके लिए मुझे आदेश दो न हे श्री वेंकटेश्वर !

-49-

हे सुदर्शनधारी ! सुना है, जीवों के पुण्य और पापों का चिट्ठा चित्रगुप्त

लिखते रहते हैं। पता नहीं, मेरे बारे में क्या लिखेंगे। अपने किए पुण्यों को आपको समर्पित कर दिया है। पापों को कराने वाले इंद्रियों को आपके समक्ष रख दिया है। मन आपको सौंप दिया है, भक्ति आपको भेंट रूप में चढा दिया है। श्रीवैष्णव बनकर, आपके दासों की शरण में आया हूँ। सब तरह अपनी कमियों को पूरा कर लिया है। अब मेरे बारे में कुछ भी लिखने की चित्रगुप्त को आवश्यकता नहीं है। इसके लिए तुम्हीं साक्षी हो। जानकार भी तुम्हीं हो। सब कुछ निवेदन कर दिया है हे श्री वेंकटेश्वर !

-50-

हे रंगधाम ! यह सुनकर कि तुम पहाड़ों को पानी पर तैरा सकने वाले बलवान हो, वानरों द्वारा राज्य का शासन करा सकने में कुशल हो, पाहन को प्राणयुक्त बनाने वाले उदार हो, पर्वत को छत्री के रूप में धारण करने वाले सत्वसंपन्न हो, एक गज की गुहार सुनकर, भूलोक में उतर आने वाले भक्त-सुलभ हो, अबला (द्रौपदी) के आक्रंदन को सुनने वाले दयालु हो, प्रह्लाद की प्रतिज्ञा को सार्थक बनाने वाले भक्त - परिपालक हो, सोलह हजार एक सौ आठ देवियों को, सब के साथ सभी प्रकार के रूप धारण कर, एक साथ प्रसन्न बनाने वाले चतुर हो, ऐसा जानकर, तुम्हें प्रणाम कर, तुम्हारी सेवा की है। भव (संसार) को जीता है। अब आनंद के साथ नृत्य करूंगा हे श्री वेंकटेश्वर !

-51-

हे रावणांतक ! देवताओं के संरक्षणार्थ पायस (खीर) में प्रवेश

कर, कौसल्या के गर्भ से जन्म लेकर, ताडकासंहरण, राक्षस-सुबाहु-वध, कौशिक-यज्ञ-संरक्षण, अहल्याशापमोक्षण (विमोचन), धनुर्भंग, सीताविवाह के बाद स्वर्ग जाने के लिए परशुराम के बनाए मार्गों को खंडित किया। दशरथ के राजतिलक की तैयारी करते समय तुमने कैकई से चौदह वर्ष के वनवास की अवधि क्यों ली ? हाँ, दशकंधर की तब तक चौदह वर्ष की आयुः शेष बची हुई थी शायद। तब शूर्पनखा का नासिकाच्छेदन, मारीच, कबंध, खर-दूषण आदि का संहरण, वालि-निबर्हण, सुग्रीवादि-वरण, वानर-नियोग, समुद्र (सेतु), बंधन (आदि कार्य) कर, राक्षस-संहार कर, लंका राज्य विभीषण को प्रदान कर, सीता के साथ अयोध्या नगरी में आकर राज्यतिलक करा लिया। वाह, कितने कपट-नाटक सूत्रधारी हो हे श्री वेंकटेश्वर !

-52-

हे केशव ! तुम विरक्त जनों के लिए मोक्षसुख हो, प्राकृत जनों के लिए घर-गृहस्थी हो, तुम्हारा ध्यान करने वालों के लिए साकार रूप वाले हो, अन्यों के लिए तीनों में (त्रिमूर्तियों में) से कोई एक हो, मूढ जनों के लिए अवेद्य हो, राक्षसों के लिए अहंकार हो, देवताओं के लिए ब्रह्मपद हो, इस प्रकार उन उन के लिए, जल के स्तर के अनुकूल कमल के समान रूप धारण करते रहते हो। जिनको जितना प्राप्त हो सकता है, उतना ही हो, अपनी शरण में आने वालों की तुम्हीं रक्षा करते हो, तुम से कोई कसर नहीं होती है श्री वेंकटेश्वर !

-53-

हे अच्युत ! आप से कुछ भी नहीं माँगूँ, ऐसे अहंकार से युक्त नहीं हूँ। आपके कार्यों को अपराध-रहित रूप से कर, आपकी सेवा करूँगा, ऐसा भी गर्व नहीं है। आप पर विश्वास रखा है, ऐसा कहकर बार-बार आपको सताने वाला भी नहीं हूँ। वेद-शास्त्रों को जानता हूँ, ऐसा कह बुजुर्गों का धिक्कार करने वाला नहीं हूँ। आश्रमाचारों को दिखा, उत्तम लोकों में घुसकर, विजय का प्रदर्शन करने वाला नहीं हूँ। शेषत्व और पारतंत्र्य की ओट में रहकर, आपकी सेवाएँ करने वाला आपका दासानुदास हूँ, इतना समझ लीजिए हे श्री वेंकटेश्वर !

-54-

हे भुजगेंद्रशयन ! लक्ष्मी समेत रहने वाले आप क्या-क्या कर रहे हैं, आपकी आवश्यकताओं को जाने बिना, आपका स्मरण नहीं करना चाहिए। रुक्मिणी देवी के साथ पासा खेलते समय द्रौपदी के "हा कृष्णा" कहने पर, "अक्षय" कहकर आपने पासा फेंक दिया, करींद्र (गजेंद्र) के आपका स्मरण करने पर वैकुंठ के भोगों (सुखों) को छोड़कर आए, जब प्रह्लाद ने कहा कि आप खंभे में हैं तो उसके वाक्यों को सत्य सिद्ध करने केलिए खंभे को चीर कर बाहर आए। इस प्रकार के आपके चरित्रों को सुनकर आश्चर्य हो रहा है। आपके समय (फुरसत) को न जानकर आपका स्मरण करना अपचार (अपराध) होगा न। आप स्वयं कब मेरी रक्षा करने आएँगे, यह सोच आपके श्री-चरण-कमलों की आहट सुनता रहता हूँ (प्रतीक्षारत हूँ।) आपके लिए मैं हर घड़ी हृदय के द्वार खोलकर, प्रतीक्षा करता हूँ हे श्री वेंकटेश्वर !

-55-

हे परंधाम के अधिप ! कारुण्य ही आपकी महिमा रूपी समुद्र का जल है, आपके कल्याण-गुण ही तरंगें हैं, आपके निग्रह और अनुग्रह ही तिमि और तिमिंगल हैं, आपकी श्रुतियाँ घोष हैं, आपका गांभीर्य गहराई है, आपका प्रताप बडबानल है, आपके कपट-नाटक-व्यापार मकर-कच्छप आदि जंतु हैं। ऐसी महिमा रूपी समुद्र को आपके साथ आपके दासों के मथने पर भक्ति रूपी कामधेनु संप्राप्त हुई, ज्ञान रूपी चंद्र का उदय हुआ, आनंद नामक ऐरावत, सात्विक नामक पंचतरु, अनंतनाम वाली अप्सरा स्त्रियाँ, तिरुमंत्र नामक अमृत उत्पन्न हुए। हम आपके अष्टाक्षर रूपी अमृत का उपभोग कर रहे हैं न हे श्री वेंकटेश्वर !

-56-

हे कालान्तक ! सुना कि करोड़ों ब्रह्मांडों को कोख में धरने वाले तुम्हें देवकीदेवी ने गर्भ में धारण किया, तुम विश्वरूप वाले को आलिंगित किया गोपियों ने, सर्वतोमुखवाले तुम्हें चूम लिया यशोदा ने, तुम अपरिमित ब्रह्म हो, तुम्हारे लिए विश्वकर्मा ने द्वारका नगर निर्मित कर दिया, तुम सर्वव्यापी हो, तुम्हारा रथ चलाया दारुक ने, अनंत नामों वाले तुम्हारा नामकरण किया गर्ग ने, तुम वेदांतवेद्य को पढ़ाया सांदीप ने। यह कैसी अद्भुत लीला है ! सुनते हुए मन चकरा रहा है। यह ऐसा ही है। यह स्पष्ट समझ में आया कि तुम्हारे दास तुम से बड़े हैं हे श्री वेंकटेश्वर !

-57-

हे जगदेकवीर ! अपनी अर्थातुरता से मैं "हा दैव" पुकार-पुकार

कर, थक गया। अपने ऐश्वर्य गर्व के कारण आपके मंदिरों के आगे वाहनों से नहीं उतरा। आपके समक्ष तांबूल-चर्वण किया। बाल्य-यौवन-कौमार-गतियों में आपको हाथ जोड़कर प्रणाम नहीं किया। पता नहीं, और क्या-क्या अपराध किये। अपने किए अपराधों के लिए क्षमा याचना के रूप से अभी आपका तिरुमंत्रोच्चारण करने से, चंचलता को छोड़ चित्त शांत हुआ। आप ही को परतत्व जानकर, शरणागत हो, आपके दासों में मिल गया। मेरे किए अपराधों के परिहार के रूप में, आप को बताने वाले आचार्यों के श्रीपादतीर्थ के लिए हाथ फैलाऊँगा, आपके दासों के उपानह सिर पर धारण करूँगा। आपके दासानुदासों का सेवक बनूँगा। आपके दासों की दासता की मुहर लगा लूँगा। मेरे समस्त अपराधों को क्षमा कर दीजिए न हे श्री वेंकटेश्वर !

-58-

हे लंकापहारी ! वैष्णव-ज्ञान नामक अंजन से तुम जैसे निधान को प्राप्त किया। यही नहीं, तुम पर भक्ति रूपी नौका के सहारे संसार-समुद्र को पार कर, वैराग्य नामक पदार्थ को, तुम्हें कर (टैक्स) चुकाए बिना, जबरदस्ती ला लिया। तुम्हारे चरणों पर रखी तुलसी माला ग्रहण कर, अजर-अमर पद को प्राप्त किया। ये हैं मेरे दुष्ट कार्य। तुम भूमीश हो। अतः मुझे दंडित करने से पहले ही निवेदन किया। ये हैं मेरे किए कार्य। अब आगे तुम्हारी इच्छा। ये लो, मैंने सब कुछ का निवेदन कर दिया है। भूलो मत, ध्यान से सुनकर, मेरी रक्षा करो न हे श्री वेंकटेश्वर !

-59-

हे मुचिकुंद पर प्रसन्न होने वाले ! संसार (इह लोक) के धर्म रूपी हाट-बाजार में, नीति-संगति नामक व्यापारी इच्छा रूपी सामान फैलाकर, सस्ते में बेच रहे थे तो मैंने बहुत कुछ बटोर लिया। उन इच्छाओं को गोद में बांध लेकर उपभोग करने का उत्साह बढ़ रहा है। तुम्हारा ध्यान करने का मन नहीं हो रहा है। मेरा मन नए बछडे के समान है। ज्ञान रूपी खंभे से बांधकर, वैराग्य नामक साधु पशु से जोड़ी बांधकर, अपनी कृषि के लिए योग्य बना लो न हे श्री वेंकटेश्वर !

-60-

हे हिरण्यगर्भ ! तुम्हारी शय्या बने आदिशेष ने ब्रह्मांड को अपने सिर पर धारण किया, तुम्हारा वाहन बना गरुत्मान अमृत ले गया, तुम्हारी पुत्री गंगा-भवानी हर (शिव) के सिर पर बैठ गई, ध्रुव ब्रह्मलोक का अतिक्रमण कर गया। नारद सुरों में झगडे पैदा कर रहा है। रुक्मांगद ने यमलोक को बिगाड़ दिया। शुक ने वैराग्य को भरपूर ले लिया। अतः यह स्पष्ट हो गया कि तुम्हारे दास तुम से बड़े हैं हे श्री वेंकटेश्वर !

-61-

हे रामराम ! सुना, तुमने समस्त लोको को एक चरण से नाप डाला, तुम्हारे रूप का कैसे वर्णन करूँ ? सुना, समस्त वेद तुम्हारी स्तुति करते हैं, तुम्हारे गुणों की कैसे गिनती करूँ ? सुना, तुम्हारे रोमकूपों में करोड़ों ब्रह्मांड भरे हुए हैं, तुम्हारा वर्णन किस प्रकार करूँ ? तुम सर्वदेश-सर्वकाल-परिपूर्ण हो, तुम्हारे प्रभाव का कहाँ तक वर्णन करूँ ? सुना,

तुम पुराण-पुरुष हो। तुम्हारे आदि अंत को कौन जान सकते हैं ? तुम्हें जानने का उद्योग (प्रयत्न) करूँगा। मैं अपनी कामना के बारे में क्या कहूँ ? सब कुछ तुम जानते हो हे श्री वेंकटेश्वर !

-62-

शरणागत जन के लिए हे वज्रपंजर ! कुछ लोग कहते हैं कि लोकसंरक्षणार्थ तुमने अपनी इच्छा से रामवतार धारण किया था। उस अवतार में तुम अपनी ही शक्ति नहीं जानते। शिवचाप का संधान कर तोड़ देना, परशुराम के कमाए स्वर्गसोपानों को काट देना, वालि के संहार का सुग्रीव को वचन देना, शरण में आए विभीषण का, पहले ही लंकाराज्य का राजतिलक कर देना, सीता को ढूँढने जाने वाले वानरों में हनुमान जी को अंगूठी देना, जलधि पर शरसंधान करना - ये सब तुम्हारी भुजशक्ति के उदाहरण ही हैं न। अपने प्रताप को तुम्हारा न जानना कैसे ? तुम सर्वज्ञ हो। तुम्हें (तुम्हारे प्रताप को) न जानने वाले ही अज्ञ (अज्ञानी) हैं हे श्री वेंकटेश्वर !

-63-

हे कौसल्यानंदन ! तुम्हीं ने यह मनुष्यजन्म देकर मुझे पैदा किया। यह मुझे दिया गया धरोहर रूपी शरीर है। इसके आभरण, अन्नपानादि भोग, कर-चरण आदि अवयवों के लिए पाप-पुण्य तुम्हारे आदेशानुसार ही हैं। मेरी क्या हस्ती ? अणुमात्र का जीव हूँ। इस शरीर को मुझ पर लाद रखा है। राजमुहर के लिए दी गई रिश्वत राजा को ही समर्पित है न ! वह कैसे ? आत्मा तुम्हारा ठौर (निवास) है, जहाँ तुम रहते हो, वहीं

एक सौ आठ तिरुपति और समस्त पुण्य क्षेत्र रहते हैं। कोई अज्ञान मेरा स्पर्श न करे, ऐसा करो न हे श्री वेंकटेश्वर।

-64-

सुग्रीव-राज्य के हे संस्थापक! मैं कभी तुम्हारे दास्य रूपी गजस्कंध पर आरूढ होकर विचरण करता हूँ। कभी "तुम मेरे हो" इस विश्वास रूपी तुरग पर बैठ विहार करता हूँ। और कभी तुम्हारी कहानियाँ सुनकर, आनंद-रथ पर विहार करता हूँ। उसके बाद विनय-विधेय-व्यवहार रूपी चरणत्राण (जूते) धारण कर, पैदल सैनिक बन, तुम्हारे आगमन की प्रतीक्षा करते हुए, तुम्हारे द्वार पर पड़ा रहता हूँ। इस प्रकार चतुरंग बल का साथ देने पर तुम्हारा दास बना रहूँगा। मुझसे जो भी अपराध हो, सहन कर लो हे श्री वेंकटेश्वर!

-65-

हे आनंद-निलय-निवासी! आपके दर्शन करते समय कोई न कोई भेंट समर्पित करने के उद्देश्य से किसी अपूर्व वस्तु के लिए मेरे ढूँढते समय, कुछ लोगों से तदर्थ पूछता हूँ तो उनसे "अरे, क्या पूछ रहे हो" कह कर हुंकार-धिक्कार से डांट सुनकर भी, उन पर क्रोध न जताकर, सिकुडकर शांत भाव से रहता हूँ। तब लगता है कि काम-क्रोध विरहित यह शांत भाव ही उत्तम वस्तु है। उसी को भेंट चढ़ाने के लिए लाया हूँ। यह अमूल्य है। तुलाभार, हिरण्यदान आदि महादान इसकी बराबरी नहीं कर सकते। अष्टांग योगों की सिद्धियां इसी में हैं। तप से उपलब्ध होने वाली महिमा भी इससे प्राप्त होती है। सोचा, इससे आप संतुष्ट हो जाएँगे।

यह सर्वोत्तम वस्तु है, अतः आप सर्वेश्वर को समर्पित किए बगैर नहीं जाना चाहिए, इस विचार से आप के समक्ष खड़ा हूँ। अपने हृदय रूपी भांडार में इसे सुरक्षित रूप से रख लीजिए हे श्री वेंकटेश्वर !

-66-

हे ज्योतिर्मय ! अपनी गृहस्थी के बारे में तुम्हें बताऊँगा। हमारे पूर्वजों के कमाए पूर्वाचार्योक्त ग्रंथ नामक वृत्तियाँ (पेशे) हैं। उन्हें बार-बार खोद-खोदकर (जोतकर) नाना देशों के श्रीवैष्णवों की कृपा रूपी नहरों को प्रवाहित कराकर, कृषि कर, सबसे पहले तुम्हारा कैकर्य नामक अकुरों को रोपकर, फसल उगाया, तुम्हारा अनुग्रह रूपी खत्ता तैयार कर, मन रूपी खलिहान में रखा। भागवत धर्म रूपी दुधारू पशुओं को पाल लिया। तुम्हारी दया से सुख से हूँ। इससे अब तुम्हारे सारूप्य नामक धन कमा लूँगा हे श्री वेंकटेश्वर !

-67-

हे शंखपाणी ! मेरी देह एक-चौकोर पाटी है। मेरे पंचविंशति तत्व चाक हैं। मेरे उच्छ्वास-निश्वास पासे हैं। मेरे पुण्य और पाप पण में लगाए गए द्रव्य हैं। इस प्रकार संघर्षरत जुआरी हूँ। तुम्हारी माया के कारण इतने काल तक खेल-खेलकर, हार कर, और एक-एक जन्म में फिर से यही खेल जिद से खेल रहा हूँ। पता नहीं जीत क्या है और कब होगी। तुम मेरे शासक हो। दास की जीत मालिक की ही है न। इसलिए मेरे लिए बाजी लगाकर जिता दो न हे श्री वेंकटेश्वर !

-68-

हे अभेद्य-विक्रम वाले ! आंखें बंद करने पर लय, निहारकर देखने पर जगत, जगाने के कारण जन्म, परस्त्रीगमन के कारण नरक की प्राप्ती, स्वपत्नी संतान के कारण स्वर्ग की प्राप्ती, क्रोध के कारण राक्षसत्व, अनाचार से पाप, आचार से पुण्य, असत्य से अमंगल, सत्य से मंगल- इस प्रकार का परिणाम सब के साथ होता है। लोग इस तात्पर्य को समझते हैं कि इस भ्रम का कारण तुम्हारी माया ही है, पर इस भ्रम में से बचने वाला कोई भी नहीं है। अब तक मैंने करोड़ों बार जन्म लिया है। सब के सब सांसारिक विषयों के लिए ही समर्पित हुए हैं। उनमें एक भी जन्म तुम्हारे लिए समर्पित नहीं हुआ। हे देव, अब अपने दोषों (अपराधों) की कहाँ तक गिनती करूँ ? वह गतजल-सेतुबंधन ही होगा। अब्र तुम्हारी माया का निग्रह करने की बात कहूँ तो वह अशक्त-दुर्जनता होगी। मेरी मूढता को समझ कर, इस जन्म में तुम्हीं ने मुझपर दया दिखाकर, अपना दास बना लिया। तुम्हें उपकार क़ा फल मिला और मेरा मनोरथ सफल हुआ न हे श्री वेंकटेश्वर !

-69-

हे अखिलांड कोटि ब्रह्मांड के नायक ! समस्त प्राणियों के शरीर तुम्हारे क्षेत्र हैं। तुम क्षेत्रज्ञ हो। जीव तुम्हारे नौकर हैं। इंद्रिय तुम्हारे लिए छंटनी है। इह-पर-सुख ग्रीष्मकालीन फसलें हैं। देहानुभव तुम्हारे द्वारा दिए जाने वाले पगार हैं। लोगों द्वारा किए जाने वाले ध्यान-अनुष्ठान श्रेष्ठ भांडागार हैं। इस प्रकार पहले सब के हृदयों में ज्ञान-भक्ति-वैराग्य नामक

बीजों को अंकुरित करा दो। सुना, पूर्वकाल में बलभद्रराम होकर, हल धारण कर, जोतकर, कालिदी की नहरें बनाई थीं न हे श्री वेंकटेश्वर !

-70-

हे असुर-कुल-संहारक ! मैं ने जन्म लेकर वय के मदोद्रेक से युक्त-अयुक्त का विवेक छोड़कर, मन को दौड़ने देकर, नाना भोगों का उपभोग किया, उसके कारण पुण्य पाप के जाल में फंसकर, कर्मबद्ध हो, मुक्त होने में अशक्त रहा। कांजीहाउस में बंधे जानवर के समान, पाश में फंसे वानर के समान, जोगी के हाथ फंसे सर्प के समान, कैरी के कीड़े के समान रहकर, तुम्हारे समक्ष निवेदन कर रहा हूँ। क्योंकि तुम सर्वलोकनाथ हो। मैं तुम्हारा अपना हूँ, इसलिए मुझपर करुणा दिखाकर, अपनी मुहर लगाकर, अपना दास बना लिया। इस आनंद के कारण तुम्हारी बड़ी प्रशंसा करता हूँ हे देव ! हे श्री वेंकटेश्वर !

-71-

हे अमृतमंथन करने वाले ! सुना है, जब महापुरुष तुम्हें चाहकर (तुम्हारे प्रति) घोर-तपस्या करते हैं, तब पक्षी उनके शरीरों पर घोंसले बना लेते हैं। ऐसे नियम हैं तो मैं तप-ध्यान कर, आपके दर्शन कर, आपको संतुष्ट कैसे कर सकूँगा ? इतने कठिन कामों के लिए मैं समर्थ कहाँ हूँ ? केवल हाथ जोड़कर प्रणाम मात्र कर सकता हूँ, बस इससे अधिक कुछ नहीं कर सकता। पूर्व में जब आप रामावतार धारण कर, काननों में विचरण कर रहे थे, कृष्णावतार के समय नंद-ब्रज में संचरण कर रहे थे, तब सुनते हैं कि पाषाण-तृण-गुल्म-लता आदि आपके

चरण-स्पर्श से पावन बन गए। उन्होंने कौन-से तप किए थे ? हम को आपके श्रीचरण ही गति हैं हे श्री वेंकटेश्वर !

-72-

हे वैजयंतीवनमालिका को धारण करने वाले ! ब्रह्मादि देवताओं के ऐश्वर्य, आपकी देवियों के कटाक्ष-वीक्षणों में किंचित-मात्र प्रसरित होने के कारण उपलब्ध हुए हैं। महापुरुषों के माहात्म्य आपके दिए वरों का जवलेश मात्र हैं। समस्त विद्याओं के प्रभाव नारायणाष्टक्षरों का सहस्रांश हैं। उत्पत्ति-स्थिति-लय तुम्हारी मायाशक्ति के संकल्प-मात्र से होते हैं। तुम्हारी महामहिमाओं को जानने की सामर्थ्य किसमें है ? वे अगोचर (दृष्टिगत होनेवाले नहीं) हैं। तुम तर्कवादों के लिए अभेद्य हो, युक्तियों के लिए असाध्य हो, भक्तों के लिए सुलभ हो। तुम अपने आप को जानते हो, अन्यों का तुम्हें जानना असंभव है हे श्री वेंकटेश्वर !

-73-

हे नरकासुर-वैरी ! सुना है, इस कल्प में ब्रह्मदेव के पचास वर्ष पूरे हो गए। उसके एक दिन की अवधि में स्वर्ग में चौदह इंद्र शासन करते हैं। अब सातवां इंद्र शासन कर रहा है। तब से लेकर, पता नहीं मैंने कितने जन्म धारण किए ? पता नहीं, किन किन जातियों में जन्मा ? मैं अपने आप को मनुष्य कैसे कहूँ ? जन्म अलग-अलग हैं, किन्तु जीव तो वही हूँ। अब ब्राह्मण जन्म देकर, श्रीवैष्णव बनाकर, अनुगृहीत किया। मैं स्वयं जानकर, आपसे निवेदन कर सकने वाला नहीं हूँ। मेरे लिए और किसी ने आपसे पण लगाकर, समझाया भी नहीं। आपने स्वयं मुझपर

दया दिखाकर, मुझे पावन बनाया। आप का निर्हेतुक-दयानिधि होना, इसी से स्पष्ट हो रहा है न हे श्री वेंकटेश्वर!

-74-

हे सोमाकासुर-भंजन! पृथ्वी पर फसलों के फलने से नाना प्रकार के धान्यों के करोडों पर्वतों के रूप में ढेर लगे हुए हैं। सस्यों के लिए बीज एक होने पर भी, फल अधिक मात्रा में है। इतनी सामर्थ्य उन बीजों में कहाँ? वह तो आपकी महिमा है। यह आपके अस्तित्व का दृष्टांत है। आपको कोई पहचान न पाए, इसलिए पीठ पीछे छिपे रहते हैं। आप जैसे भी हों, वेदशास्त्र आपके बारे में घोषित किए बिना कैसे रहेंगे? आपकी करुणा सब को आप्लावित किए बिना कैसे रहेगी? आपके दिव्य तेज (प्रकाश) को ढककर कैसे रखा जा सकता है? बस, बस, अब आपके लीलाविनोद बहिर्गत हो गए हैं। जैसे विभांडक को, मुचिकुंद को, उदंक को प्रत्यक्ष दर्शन दिए थे, वैसे ही मुझे भी दर्शन दीजिए न हे श्री वेंकटेश्वर!

-75-

हे अयोध्यापुराधीश्वर! मन में यही सोचता रहता हूँ कि किस प्रकार मन को वश में कर लूँ, किस प्रकार से आपको प्रसन्न करूँ, किस रूप में आपकी कृपा मुझपर प्रसरित हो, किस रीति से आपको अपने अभिमुख कर लूँ, किस क्रम से आपका आत्मीय बन, जीवन-यापन करूँ। आप मेरे अंतरंग में, मेरे निकट ही हैं। ब्रह्मादि देवताओं के लिए भी दुर्लभ बने आप मेरे लिए सुलभ कैसे बनेंगे, यह सोचते हुए चातक

पक्षियों के मेघ-जल के लिए आतुर बने रहने के समान, आकाश-स्थित सूर्य के साथ कमलों के अपने संबंध को निभाने के समान, चंद्रोदय को देख, समुद्र के उफन पड़ने के समान, चांदनी में चंद्रकांतामणियों के पिघल जाने के समान, मैं आपके दर्शनों की प्रतीक्षा कर रहा हूँ। कमी किस बात की है ? शाखा पर पड़े हुए कीटक को लाकर, भ्रमर उसे अपना रूप दे रहा है। इस भ्रमरकीटन्याय को छोड़कर मेरे पास कुछ भी नहीं है। अब आपकी इच्छा और मेरा भाग्य हे श्री वेंकटेश्वर !

-76-

हे वासुदेव ! हे देवकीनंदन ! हे गोपालमूर्ती ! हे लक्ष्मीमनोहर ! हे भूकांताप्रिय ! हे गोपिकावल्लभ ! हे रुक्मिणी-प्राण-नायक ! हे सत्यभामामनोहर ! हे जांबवतीसुमुख ! हे कालिंदी सरसल्लापशील ! मित्रविंदा-भोगलोकैकरत ! भद्राकुचकुंभविहारी ! भागवतपुराण तुम्हारे रासग्रहादि सरससत्कथाओं से भरा हुआ है। सुना ये कथाएँ सुनने वालों के लिए अनंत पुण्य, परलोक साधक होती हैं। यह कैसा विचित्र है कि तुम्हारी कौतुक-क्रीड़ाएँ मोक्ष के साधन हैं हे श्री वेंकटेश्वर !

-77-

हे ध्रुववरद ! पता नहीं मुझे दर्शन कैसे देंगे ? प्रियतम के आगमन के लिए प्रतीक्षारत विरहिणी के समान आपके आगमन की प्रतीक्षा कर रहा हूँ। स्तन्य के लिए आतुर शिशु के समान, आपके भुक्तशेष को ढूँढ रहा हूँ। खेत में चरकर आने वाली धेनु के लिए प्रतीक्षा करने वाले बछड़े के समान आपके कटाक्ष (अनुग्रह) के लिए तरस रहा हूँ। हंस-तूलिकातल्प

पर लेटने वाले राजा हैं आप। आपके चरणों में साष्टांग (प्रणाम) करने के लिए प्रतीक्षा कर रहा हूँ। ये मेरे गुण हैं। शास्त्रज्ञ कहते हैं कि अपेक्षा करने वालों की उपेक्षा नहीं करनी चाहिए। अस्तु। प्रभु का आदर से देना ही पर्याप्त है, दास को अधिक नहीं मांगना चाहिए। आप मेरे हृदय को कभी भूलिए मत। मुझे सब कुछ मिल जाएगा हे श्री वेंकटेश्वर !

-78-

हे हलायुधधारी ! मन्मथ नामक ऐंद्रजालिक सुंदर स्त्री-पुरुषों को इन्द्रजाल-विद्याओं से नचा रहा है। परस्पर अवलोकनों में कमल और कल्हार पुष्प बरसा रहा है। मोहसमुद्र में आकर्षित कर खुले आम तैरा रहा है। जूडे में अंधेरियां, मुख पर चंद्रोदय, शरीर पर बिनमेघ की वर्षाएँ, परस्पर विहार में अग्निस्तंभन, रतिबंधों में सिद्धविद्याएँ प्रदर्शित कर रहा है। इन क्रीड़ाओं में मुग्ध होकर, जीव सम्मुख में स्थित तुम को जानने में चकित हो रहे हैं। किन्तु तुम इन मायाओं के वश में न होकर, मंदहास से देखते रहते हो। संभवतः सबको ये विद्याएँ सिखाने वाले गुरु तुम ही हो। यह तुम्हारे लिए विनोद हो सकता है किन्तु हमें भ्रम में मत डालो हे श्री वेंकटेश्वर !

-79-

हे खरदूषणवैरी ! तुम्हारे कल्पित वेदोक्तधर्मो के अनुसार चलें तो पाप नहीं लगते। ऐसा न कर, परकांताओं और परधन के मन को द्वेलित करते हुए, समक्ष संचयित होने पर हम चंचलचित्त वाले जीव, उन पापों में आसक्त हुए बिना नहीं रह सकते। किए कर्म बलवत्तर होते हैं। उन्हें

भोगे बिना नहीं रहा जा सकता। उससे हमें सुख नहीं मिलता। हमारे किए अपराध जब हमारे सिर पर हैं, तब आप से क्या निवेदन करें ? हमारे पास आपका आश्रय रूपी वज्रपंजर है, आपका नामस्मरण रूपी खड्ग है, आप पर भक्ति रूपी कवच है, आप की कृपा रूपी आधार है। मेरे आचार्यों से मेरे इन समस्त दुरितों को टुकड़े-टुकड़े करवाकर फिंकवा देंगे या हम पर दया दरसाएंगे ? बताइए हे श्री वेंकटेश्वर !

-80-

हे चाणूरमर्दन ! तुम्हारा नाम लेकर बुलाकर, आवाहन कर, हमारे घर में, पीठ (चौकी) पर बिठाकर, पूजा कर रहा हूँ। समुद्र को अर्घ्य-पाद्य-आचमनीय देने के समान, मेरु पर्वत को आभूषण पहनाने के समान, मलयाचल को चंदन लेपने के समान, वसंत को पुष्प समर्पित करने के समान, कस्तूरिमृग को धूप देने के समान, सूर्य के लिए दीपाराधन करने के समान, अमृतप्रद तुम्हें नैवेद्य समर्पित करने के समान, तुम्हारा अलंकार कर, अर्चना कर रहा हूँ। मेरी क्रियाओं को देख, तुम हंस रहे होगे, ऐसा लज्जित न होकर उपचार कर रहा हूँ। जो भी हो। पूर्व में जब तुमने कृष्णावतार धारण किया था, तब क्या मिथिलानगर में श्रुतदेव नामक ब्राह्मण ने अपने घर ले जाकर, तुम्हारी पूजाएँ नहीं कीं ? मत्स्यावतार के समय सत्यव्रत नामक राजा ने अर्घ्यप्रदान कर, तुम्हारे रूप के दर्शन नहीं किए ? कुब्जा ने तुम को चंदन प्रदान कर, सौन्दर्य प्राप्त नहीं किया था ? मालाकार ने तुमको पुष्पहार देकर, तुम से प्रशंसाएँ प्राप्त नहीं कीं ? विदुर, तुमको भोजन देकर, प्रसिद्ध नहीं हुआ ? ये सब देखने-सुनने के बाद हमें

पर लेटने वाले राजा हैं आप। आपके चरणों में साष्टांग (प्रणाम) करने के लिए प्रतीक्षा कर रहा हूँ। ये मेरे गुण हैं। शास्त्रज्ञ कहते हैं कि अपेक्षा करने वालों की उपेक्षा नहीं करनी चाहिए। अस्तु। प्रभु का आदर से देना ही पर्याप्त है, दास को अधिक नहीं मांगना चाहिए। आप मेरे हृदय को कभी भूलिए मत। मुझे सब कुछ मिल जाएगा हे श्री वेंकटेश्वर!

-78-

हे हलायुधधारी! मन्मथ नामक ऐंद्रजालिक सुंदर स्त्री-पुरुषों को इन्द्रजाल-विद्याओं से नचा रहा है। परस्पर अवलोकनों में कमल और कल्हार पुष्प बरसा रहा है। मोहसमुद्र में आकर्षित कर खुले आम तैरा रहा है। जूडे में अंधेरियां, मुख पर चंद्रोदय, शरीर पर बिनमेघ की वर्षाएँ, परस्पर विहार में अग्निस्तंभन, रतिबंधों में सिद्धविद्याएँ प्रदर्शित कर रहा है। इन क्रीड़ाओं में मुग्ध होकर, जीव सम्मुख में स्थित तुम को जानने में चकित हो रहे हैं। किन्तु तुम इन मायाओं के वश में न होकर, मंदहास से देखते रहते हो। संभवतः सबको ये विद्याएँ सिखाने वाले गुरु तुम ही हो। यह तुम्हारे लिए विनोद हो सकता है किन्तु हमें भ्रम में मत डालो हे श्री वेंकटेश्वर!

-79-

हे खरदूषणवैरी! तुम्हारे कल्पित वेदोक्तधर्मों के अनुसार चलें तो पाप नहीं लगते। ऐसा न कर, परकांताओं और परधन के मन को द्वेलित करते हुए, समक्ष संचयित होने पर हम चंचलचित्त वाले जीव, उन पापों में आसक्त हुए बिना नहीं रह सकते। किए कर्म बलवत्तर होते हैं। उन्हें

संकोच करने की आवश्यकता नहीं है। आप भक्तसुलभ हैं। हमारी अल्प-आराधना को भी स्वीकार करेंगे हे श्री वेंकटेश्वर!

-81-

हे देव चूड़ामणि! तुम ने धारण किए शंख-चक्र, आरूढ हुए गरुड वाहन पर, धारण किए चतुर्भुज। तुम्हारे कार्य हैं कंस, कालिय, मुर, नरक आदि असुरों का मर्दन। नीलमेघश्याम वर्ण से, विष्णु स्वरूप वाले हो। अभिनय करने वाले तुम्हें देख देवकी और वसुदेव भ्रम में कैसे पड़ गये? तपस्या करने वाले व्यास-वाल्मीकि आदि मुनींद्र तुम्हें वश में करके भी मोक्ष की याचना करना कैसे भूल गए? शास्त्रों का अध्ययन करते हुए, परब्रह्म को खोजने वाले विद्वान और उत्तम ब्राह्मणों का विवेक कहाँ चला गया? ब्रह्मा-इंद्र आदि देवता तुम्हारी सेवा कर, सायुज्य को प्राप्त नहीं कर सके। उनके भाग्य कहाँ गए? उसे रहने दो। अनादि देव तुम सबके हृदयों में स्थित हो। तुम्हारे बारे में सोचकर भी सब तुम्हें भूले हुए हैं न हे श्री वेंकटेश्वर!

-82-

हे वराहावतारी! तुम्हें खोज-खोजकर थक गया। तुम्हारे सृजित ब्रह्मांड को नमस्कार। ऐसे ब्रह्मांड के लिए आधार-भूत तुम्हारे रोमकूपों को प्रणाम। अजांड में स्थित तुम्हारे विश्वरूप को साष्टांग प्रणाम। तुम्हारे तिरुपतियों को वंदन। चराचर युक्त तुम्हारी सृष्टि को अभिवादन। तुम्हारे रूप-विग्रहों को करबद्ध प्रणाम। तुम्हारे अंतर्यामित्व को जयजय। तुम्हारे निवास शेषाचल को वंदन कर रहा हूँ। उसमें स्थित तुम्हारी मूर्ति

की शरण। मुझे अपनी करुणादृष्टि से देखो। मेरे अज्ञान को दूर कर दो। तुम्हारे चरणों में मुझे सदा अचल भक्ति प्रदान करो हे श्री वेंकटेश्वर !

-83-

हे अमित कल्याण गुणाकर ! जाति-कुल-शील-वित्त के कारण मेरा मन गर्व को उत्पन्न कर ले रहा है। इसे गुणपाठ सिखाओ। यह मुझ से नहीं होगा। लोक के व्यवहार का परिशीलन कर देखने पर, कहीं दासजनों को अहंकार उचित है ? कहीं नपुंसक को कामोद्रेक होगा ? क्या कार्यातुर को लोभ शोभा देगा ? क्या दीन में बल होता है ? भूखे व्यक्ति में मद होता है ? अशक्त को मात्सर्य होता है ? ऐसे सब लोगों को वे गुण सहज बनाकर प्रदान किये ? ये सब असंभव-ब्रह्मचर्य हैं। उन्हें छोड़ दो। मुझे दर्शन देकर, मेरी इच्छा के अनुकूल, मेरी तपस्या को सफल बनाओ। तुम मुझमें हो, तुम जैसा करोगे, वैसा होगा हे श्री वेंकटेश्वर !

-84-

हे अधोक्षज ! जिसके रोम से करोड़ों अजांड उद्भूत हुए, जिस मूर्ति के नाभि-कमल से ब्रह्मा का आविर्भाव हुआ, जिस महादेव के नाम पर "श्री महाविष्णो-राज्ञया" यह महा संकल्प प्रचलित है, जिस तत्व को पुराण-पुरुष कहते हैं, जिस बलवान को दानव-वैरि कहते हैं, जिस महानुभाव ने समुद्र-मंथन कर देवताओं में अमृत बांटा, जिस पुरुष के प्रह्लाद-नारद-वसिष्ठ आदि दास हैं, जिस महान् व्यक्ति के सूर्य-चंद्र नेत्र हैं, जो लक्ष्मीपति है, जो सर्वरक्षक है, जो यज्ञकर्ता है, जो यज्ञभोक्ता है,

मोक्ष प्रदान करने के लिए जो कर्ता है, वह सब तुम्हीं हो। ऐसे तुम्हें अनंत-नमस्कार करता हूँ। ध्यान दो हे श्री वेंकटेश्वर !

-85-

हे योगेश्वर ! परम ज्ञानियों के काम-क्रोध-लोभ-मोह-मद-मात्सर्य शांत हो जाने चाहिए। वे कैसे शांत हो सकेंगे ? धूप में रहने वाला व्यक्ति छाया में जाना चाहे तो वही कामना होगी, मक्खी के अपने अंग पर बैठने पर, उसे हटाने का प्रयत्न करने पर, वही क्रोध होगा, अपना मंत्र दूसरों को न बताएँ तो वही लोभ होगा, दूसरे जब प्रणाम करते हैं, तब आसीसें तो वही मोह होगा, चुटिया में जूँ रेंगने लगें और नाखूनों से खुरच लें तो वही मात्सर्य होगा। इन सब धर्मों को यथावत् पालन करने का विचार करने पर मुझसे सब अपराध ही होंगे। समस्त प्रकार के अपराधों को करके, तुम्हारी शरण में आया हूँ। मेरी रक्षा करो न हे श्री वेंकटेश्वर !

-86-

हे सीतापति ! आपके आकार को आंख भर देख सकना किसके बस की बात है ? आपके भक्त-वात्सल्य आदि गुणों के बारे में सोचकर थोड़ी देर जयजय करके, आपके कल्पित (सिरजोए) जगत को देख थोड़ी देर आश्चर्यमग्न होकर, समस्त लोगों को वर देने की आपकी उदारता के बारे में थोड़ी देर सोचकर, सराहकर, अहल्या-द्रौपदी-प्रह्लाद आदियों के प्रति प्रसन्न होने वाले आपकी महिमा के बारे में थोड़ी देर सोचकर, सराह कर, रावण-कुंभकर्ण आदि दानवों का संहार करने वाले आपके प्रताप के बारे में थोड़ी देर सोचकर, विभीषण-हनुमान आदि पर

संतुष्ट होने वाले आपकी कीर्ति के बारे में थोड़ी देर गुरुजनों से सुनकर, आपको हाथ जोड़कर प्रणाम कर, परब्रह्म होकर विलसित होने वाले आपके प्रभाव के बारे में थोड़ीदेर तक सोचकर, हम लोग प्रशंसा कर सकते हैं। इस प्रकार समय बिताने पर आप हमें साक्षात् दर्शन देंगे न हे श्री वेंकटेश्वर !

-87-

हे सर्वेश्वर ! ध्यान दो, जगत् तुम्हारी नाट्यशाला है, मेरे पूर्व जन्म तुम्हारे समक्ष खेले गए बहुरूप हैं, दारा-सुत-बंधुजन बाजे बजाने वाले हैं, तुम्हारी स्तुति करने वाले वेद-शास्त्र-पुराण तूर्यत्रय हैं, हमारे चरण-संचार नाट्य-क्रियाएँ हैं, मुंह से निकलने वाले वचन क्रिया-भाषांग हैं, भोग्य-वस्तुएँ प्रसन्न होकर तुम्हारी दी गई संपत्तियाँ हैं। इस प्रकार तुम्हारे प्रति जितने समय तक उत्साह होगा, तब तक नाचते रहेंगे। तुम्हारी सभा में रहने वाले नर्तक हैं, अतः तुम को विनोद प्रदान करते हुए हमें जीवन-यापन करना चाहिए। शांत भाव से मोक्षपद को प्राप्त करने की बात संगत नहीं है न। तुम कृपा कर प्रदान करोगे तो ठीक है। जानकार शासक से मांगने की क्या आवश्यकता ? अब सब को सब प्रकार से क्षमा कर दो हे श्री वेंकटेश्वर !

-88-

हे मदनजनक ! आपका ध्यान करते समय आपके अवयवसौंदर्य के बारे में विचार न कर सके किन्तु शतकोटि जन्मों के आधार बने आपके सौंदर्य को छिपाया नहीं जा सकता। आपके श्रीशरीर के लिए

वह सहज है। आपके पराक्रम की हम स्तुति न कर सकें तो भी शंख-चक्र आदि आयुध आपको अपने कंधों पर धारण करने चाहिए, छोड़ नहीं देना चाहिए। हम आपका अलंकरण न कर सकें तो न सही, परन्तु आपके अपने किरीट-कुंडल-पीताम्बर आदि, लोकालंकार हुए बिना नहीं रहेंगे। श्रीदेवी और भूदेवी के आपके उभय पार्श्वों में रहते समय, मैं आपका कैंकर्य (सेवा) करने में समर्थ न हो पाऊँ तो सही, अनंत गरुड-विष्वक्सेन आदि परिवार के सदस्य आपकी सेवा करेंगे ही। और अप्रयत्न रूप से सही, आपका नाम लेने पर आप आ जाएँगे, आपके साथ सभी आ जाते हैं। हम को बहुत विचार करने की क्या आवश्यकता ? आपका नाम लेना ही सब का मूल है। इसी से नित्यानुसंधान प्राप्त होता है हे श्री वेंकटेश्वर !

-89-

हे ईश्वरेश्वर ! अध्ययन करना चाहें तो एक के बाद एक अगणित संदेह पैदा होते हैं। अध्ययन न करें तो ज्ञान नहीं होता। फिर आपको चारों दिशाओं में ढूँढना चाहकर आँखें खोलें तो लोक के व्यापार भ्रम में डाल देते हैं। पलकें बंद भी कर लें तो अनेक चिंताएँ घेर लेती हैं। पुण्य कार्य करके सही, तुम को देखना चाहें तो वे भी बंधन हो जाते हैं। न करूँ तो सर्वथा नास्तिक बन जाऊँगा। इस तात्पर्य को अन्यों के साथ सोच देखूँ तो बहुत से कुतर्क उत्पन्न हो जाते हैं। छोड़ दूँ तो सर्व-सिद्धांतों का समाधान नहीं होता। जगत् बहुत सारे संदेहों का कारण है। किस प्रकार से तत्व का निश्चय किया जा सकता है ? इसलिए क्या करूँ तो क्या होगा, इस भय के कारण तुम्हारे दासों के मार्ग का अनुसरण कर, उनके

प्रेम को प्राप्त कर, तुम्हारी शरण में आया हूँ। तुम्हीं वहन कर मेरी रक्षा करोगे हे श्री वेंकटेश्वर !

-90-

हे शेषशयन ! मं तुम पर किस प्रकार चित्त को लगाऊँ ? मेरे योग तो कांता-संयोग हैं, मेरा नियम तो प्रातः सायं अन्न-पान ग्रहण करना है, मेरे नित्यकर्म तो सांसारिक-कृत्य हैं, मेरा व्रत तो रात को सोना है, मेरे धर्म तो शरीर भोग हैं, मेरे पद तो बाल्य-कौमार-यौवन की अवस्थाएँ हैं, मेरी घटनाएँ तो पुण्य और पाप हैं, मेरे वेदपाठ तो अन्योन्य-धिक्कार हैं, मेरे पंचयज्ञ तो पंचेंद्रिय-व्यापार हैं, ये हैं हमारे व्यवहार। सोचकर देखेने पर तुम सकल लोकों में उन्नत हो, तुम्हें परिशीलन कर देखें तो अंतर-महांतर रहने पर भी तुम मेरी रक्षा कर रहे हो। तुम्हारे गुण तो विरल हैं हे श्री वेंकटेश्वर।!

-91-

हे नरहरि ! यह मुंह तो प्रारंभ से ही बातों की बांबी है। इसके रहते मौन की साधना कैसे हो सकेगी ? कर्णरंध्र गिरिगुफाओं के समान हैं। कोई बात करे, उसकी प्रतिध्वनियाँ मुखरित होती हैं। उन्हें सुने बगैर कैसे रहा जा सकता है ? नेत्र तो रूप के दर्पण-सम हैं। इनमें सब कुछ के प्रतिबिंबित होते रहने पर, देखे बिना कैसे रहा जा सकता है? इस देह को भूख के प्रतिदिन पीड़ित करते रहने पर, स्वाद लिए बगैर कैसे रहा जा सकता है ? नासिका से प्रतिदिन ग्यारह हजार छः सौ उच्छ्वासों के होने पर, गंध सूंघे बगैर कैसे रहा जा सकता है ? जब तुम रक्षक बने हुए हो,

मुझे इन अनुभवों को प्राप्त करने से क्या हानि होगी ? मैं तुम्हारा लक्ष्य हूँ और तुम्हारे चरण मेरे लक्ष्य। तुम मुझे सब प्रकार से बचाते रहोगे न हे श्री वेंकटेश्वर !

-92-

हे द्वारकावासी ! तुम ईश्वर हो, तुम्हें चर्म-मांस-अस्थिमय करों से प्रणाम कर रहा हूँ। परम पावन तुम्हारे तिरु (श्री) नाम को अपने जूठे मुंह से जप रहा हूँ। गुप्त रूप से तुम्हारे किए लीला-विनोदों के बारे में गोपिकाओं के कहने पर, इन कानों से सुनने लग जाता हूँ। एकांत में लक्ष्मीसमेत रहने वाले तुम्हारी सेवा, समय-असमय का ध्यान न रखकर, करता हूँ। तुम्हारे कोमल शरीर को अपनी भौंदी नजरों से देखता हूँ। तुम्हारे मन को न समझकर, तुम्हारा आवाहन कर पूजाएँ करता हूँ। मैं यह नहीं जानता कि यह अपचार है या उपचार। जो भी करें, अपने दासों के दोषों (अपराधों) पर ध्यान न देना तुम्हारा गुण है। तुम मेरे पक्ष में हो, यह जानकर, निर्भीकता से, उपेक्षाभाव से अपराध करता जाता हूँ। सहन कर लो न हे श्री वेंकटेश्वर !

-93-

हे विट्ठलेश्वर ! पता नहीं, मेरा साहस कैसा है ? मांगे न जा सकने वाले फल तुम से मांगने का मन हो रहा है। मेरे लिए अनुचित पदार्थों को मांगने का निश्चय जिह्वा कर रही है। तुम्हारे अभेद्य मन का शोध करना मेरा गुण है। मेरी बुद्धि अगम्य रहस्योद्योगों को खोज रही है। मेरा हृदय अलभ्य पदों को प्राप्त करने को उद्यत हो रहा है। मेरा उत्साह मुझसे तुमको प्राप्त होने वाले भोगों का अवलोकन कर रहा है। सतत मुझसे

लगे रहकर, नाना भोग (सुख) प्रदान कर, तुम्हारे अनगिनत उपकार करने पर भी, मैं तो कृतघ्न अपराधी हूँ। अपने बारे में क्या निवेदन करूँ ? लोक-जननी अपनी देवी (लक्ष्मी जी) का ध्यान रखकर अथवा स्वयं अपने करुणानिधि नाम का ध्यान रखकर सही, मेरी रक्षा करो न हे श्री वेंकटेश्वर !

-94-

हे त्रिविक्रम ! सालग्राम, चक्र पाणि, देवपूजा, अश्वत्थ-तुलसी सेवा, गो-ब्राह्मण वंदन, तीर्थ स्नान, वेदपाठ, तप-यज्ञ, एकादशीव्रत, दान, संकीर्तन आदियों से कृतार्थ बन जाइए, ऐसा आदेश देकर तुम ने मानवों को भरपूर पुण्य प्राप्त करने के अवसर दिये। समक्ष दर्शन देने वाले तुम्हारी मूर्तियों का आश्रय न लेकर, अदृष्ट परमपद में तुम्हें देखना चाहते हैं। वह हमारे लिए कितना दुर्लभ है ? साक्षात्कार में (समक्ष) तुम्हारी सेवा करने पर, परोक्ष को तुम्हीं प्रदान कर दो। जल्दबाजी क्यों ? तुम तो उभय-विभूतियों (इह और पर) के नायक हो। तुम्हारी इतनी परीक्षा कर लेने में मैं कहाँ समर्थ हूँ ? मैं तो तुम्हारा दास्य ही चाहूँगा न हे श्री वेंकटेश्वर !

-95-

हे नरसिंह ! इस भूलोक में चौरासी लाख जंतुओं के गर्भ से जन्मा तो क्या ? मुझे तो थकान नहीं है। तुम मेरी अन्तरात्मा बन कर साथ रहते हो। मैं तो इसी की चिंता करता हूँ कि इससे तुम्हारे श्री-चरण कितने मुरझा गए। इतना ही नहीं, पूर्व में स्वर्ग-नरक आदि लोकों में सुख-दुखों

को भोगते समय, तुम मुझमें रहकर, मुझपर तरस खाकर, क्या क्या कह रहे हो, इसी की चिंता है। मेरे उपवास रख, शीतोष्ण का सहन कर, तप करते समय तुम्हें थकावट नहीं होगी न, इसी की चिंता करता हूँ। तुम्हारी श्री-आराधना करते समय, तुम्हें निमंत्रित कर, नैवेद्य चढाते समय यही सोचकर संकोच करता हूँ कि वह तुम्हें रुचेगा कि नहीं और उस समय तुम्हारा मन कैसा होगा। पर्वत-सम तुम्हें सूक्ष्म बनाकर आत्मा में रख लेने से तुम्हें कष्ट तो नहीं होगा न, इसी की चिंता करता हूँ। मेरे समस्त अपराधों को क्षमा कर दो न हे श्री वेंकटेश्वर!

-96-

हे भीम विक्रम वाले! ज्ञान नामक श्रृंगारोपवन को काम और क्रोध नामक दो वराह खोद डाल रहे हैं। शम-दम रूपी गड्ढे खोदकर उन्हें उसमें डाल देना चाहता हूँ तो मेरे पूर्वजन्म-प्रतिबंध रूपी दो भल्लूक उसी में से गुर्रा रहे हैं। तुम पर आशा रूपी पाशों से उन्हें बांधकर उसमें डाल दो। पूर्व में मायामृग का संहार किया, इसलिए (तुम्हें सर्माथ मानकर) निवेदन कर रहा हूँ हे श्री वेंकटेश्वर!

-97-

हे त्रिदशवंद्य! ये प्राणी अनेक कालों (युगों) के हैं। बहु कल्पों में किए गए बहुविधकर्म, गिनती में अनेक हैं। भोगे बगैर रहा नहीं जाता। पुराणों का कथन है कि पूरे वंश में यदि एक भी वैष्णव हुआ तो करोडों कुल (वंश) कृतार्थ बन जाएँगे। कहते हैं, यदि एक बार भी मन में आपका स्मरण करें तो दुस्थितिप्रद सभी विपत्तियाँ दूर हो जाएँगी। कहते

हैं, यदि आपके चरणों पर फल-पुष्प डाल दें तो नानापुण्य प्राप्त होंगे। आपकी महिमाएँ अतिविचित्र हैं। तालाब के पानी से सींचकर फलों को उगाने के समान, तृण चरकर धेनुओं के दूध देने के समान, गुरुजनों को हाथ जोड़ प्रणाम कर, आशीर्वाद प्राप्त करने के समान, सरल-उपायों से आपको प्रसन्न कर, आपकी सराहनाएँ प्राप्त करेंगे। हम पर प्रसन्न हो जाइए न हे श्री वेंकटेश्वर !

-98-

हे वासुदेव ! सुना है, तुम समुद्र पर रथ चलाकर, कुलाचलों (कुल-पर्वतों) को दबा देकर, चक्रवाल पर्वत को पार कर, अंधकार को छेद कर, दिव्यतेज में पैठकर, ब्राह्मण के पुत्र को ले आए थे। सुना, जब चाहा तब गुरुड-वाहन और शंख-चक्र आदि आयुधों को बुलाकर, अनेक भुजाओं के साथ प्रकाशमान होते हो। सुना, सूर्य को, चक्र की आड में रखकर सैंधव का संहार कराया था। गोवर्धनोद्धरण, द्वारका-निर्माण आदि अतिमानुष कृत्य जितने चाहें, उतने हैं (वर्णन करने के लिए)। तुम्हारी महिमाओं का वर्णन करना चाहूँ तो वे अवाङ्मानसगोचर हैं। नवनीत-चौर्य, वत्स-बाल-हरण, गोवत्स-परिपालन, उलूखल-बंधन, कुब्जा-प्राणनायकत्व आदि पर्याप्त नहीं है क्या ? ये ही तुम्हारी कीर्तियों को प्रकाशमान करने के लिए पर्याप्त हैं हे श्री वेंकटेश्वर !

-99-

हे सीतावल्लभ ! मेरी कविता-कन्या के तुम वर (दूल्हे) हो। गणों की जोड़ी दैव और मानुष है। मेरी जिह्वा ही विवाह-वेदी है। मेरा मन ही

परदा है। मेरी प्रसन्नता की कलाएँ ही बासिक (वर और वधू के ललाटों पर विवाह के समय बांधी जाने वाली पट्टीनुमा अलंकार) हैं। मेरी भक्ति ही कंकण है। अक्षर ही अक्षत् (पीले चावल जो वधू वर एक दूसरे पर उंडेल लेते हैं) हैं, शब्द वाद्य-घोष हैं। वेद स्वर ही सुहागिनों के गीत हैं। चितवनें ही मंगल-आरतियाँ हैं। मेरे वाक्य ही फूलों की मालाएँ हैं। तुम्हारे सहस्रनाम ही रिश्तेदार हैं। तुम्हारे आत्मगुण ही शोभन-द्रव्य हैं। (इन सबको) स्वीकार कर इस प्रकार तुमने विवाह कर लिया। अब मेरे कर्मबंधन छूट गए न। अब तुमने इस प्रकार पाणिग्रहण कर लिया न। अब तुम और तुम्हारी देवियाँ चिरंजीव बनकर, संगीत-साहित्य रूपी नाना अलंकारों से और पुत्र-पौत्राभिवृद्धि से विलसित होते हुए, अपने दासों की रक्षा करते रहेंगे न हे श्री वेंकटेश्वर !

-100-

हे श्री पुरुषोत्तम ! करिराज की रक्षा की। सभा में द्रौपदी के मान को बचाया। प्रह्लाद की बातों को सुन लिया। शरण में आए विभीषण की रक्षा की। रावण-कुंभकर्णादि का वध कर, (विभीषण से) लंका पर राज्य कराया। बलि को पाताल भेज दिया। ध्रुव को ध्रुव रूप से राज्याधिकार की कृपा की। जो जानकर तुम्हारी स्तुति करते हैं, तुम उन्हें अपना पद देकर रक्षा करते हो हे श्री वेंकटेश्वर !

-101-

हे करुणाकटाक्ष वाले ! ऐसा सिरजोया कि प्रत्येक को अपना-अपना जन्म हितकर प्रतीत हो। बंधनों से छूटने के समान, मन देह-त्याग

को मान ले, ऐसा स्वीकार करवाया। ऐसा किया कि पापमूलक क्रीडनसमय, अन्नपानादि की रुचियाँ, स्त्रीभोग जीव को सुखकर लगें। कर्मानुभवरूपी परलोक सुख, तदनुरूप इन दिव्यशरीरों को प्रदान कर रहे हो। इस प्रकार समस्त जंतुओं को अव्याजांतर-सुख प्रदान कर रहे हो तो हम कहीं भी रहें तो क्या हुआ ? हे श्री वेंकटेश्वर !

-102-

हे वेणुनादप्रिय ! मेरे (तुम्हारे) दास बन जाने से तुम्हें कौन-सा गौरव मिला? मेरी स्तुतियों से तुम्हारा क्या लाभ हुआ ? और मेरे प्रणाम करने से तुम्हें क्या लाभ ? तुम्हारे प्रति मेरे किए गए उपवास-तप से तुम्हें मिलेगा क्या ? हमारे नियम और व्रतों से और भी जन्म अंकुरित करा रहे हो। जीव के लिए जन्म और मरण बंधन-सम नहीं लगते। इन सब के लिए तुम्हारे होने से जंतुओं के लिए सुख-दुखों का भोग सरल हुआ। तुम दयानिधि हो। अपनी सेवा करने वालों के लिए तुम कामधेनु, कल्पवृक्ष और चिंतामणि बनकर वर देते हो हे श्री वेंकटेश्वर !

-103-

हे यज्ञरक्षक ! मात्र अज्ञानी होकर मैं ने पाप किए हैं। उन्हें छिपाकर थोड़े ही रखा है ? पुण्य समझकर कुछ का, तुम्हारी कृपा से, आनंद से भोगते हैं पर क्या हम फलों को अंकुरित करा पाते हैं ? ये दोनों (पाप-पुण्य) भी, हमारे अंतर में रहकर तुम्हारे कराए कार्य हैं। उसे जानते हुए भी हम पर निष्ठुर न बनकर, दाक्षिण्य भाव से कर्म करते हुए, आदि और मूल को हिलाकर मायाओं को प्रदर्शित करते हो। दास बने हुए लोगों के

तुम्हारा स्मरण मात्र करने से, उनके दोषों को हर लेते हो। तुम जैसा करेंगे, वैसा ही होगा। लोक में कहा गया है "राजानुमतो धर्मः" तुम्हारा हमारे प्रति अनुग्रह समुचित है। हमारी रक्षा करो न हे श्री वेंकटेश्वर !

-104-

हे कालियमर्दन ! ज्ञान पर विश्वास रख, कर्म को छोड़ दें तो तुम्हारी आज्ञा का संभवतः उल्लंघन होगा। यह सोचकर, मन में शंका उत्पन्न हो रही है। ऐसा न कर , विहित कर्म कर, कर्म-फल तुम्हें समर्पित करना चाहूँ तो तुम तो अवाप्त-सकल-कामनाओं वाले हो। यह (कर्म-फल-समर्पण) तुम्हारे लिए कौन बड़ी बात होगी, यह सोचकर संकोच होता है। लोक-दूषण के बस होकर, कर्म करूँ तो यह चिंता उत्पन्न होती है कि कहीं ये प्रतिबंधक न बन जाएँ। एक बार तुमने कहा था कि कर्म तो ज्ञान के साधन हैं, और एक बार कहा था कि (कर्म की अपेक्षा) ज्ञान अधिक (महत्वपूर्ण) है। लोगों के लिए कर्मकांड और ज्ञानकांड का निर्णय किया, पर किसी एक का निश्चय नहीं किया। इसलिए विवेकी पुरुष अपने अधिकार (योग्यता) के अनुसार, किसी एक को चुन कर आचरण करते हैं। (इसमें) तुम्हारा कोई दोष नहीं है हे श्री वेंकटेश्वर !

-105-

हे श्रीधर ! एक देहधारी व्यक्ति दिन मं सांसारिक विषयों में मस्त रहकर, रमण कर, रात के समय दिन के घरेलू चिंताओं को स्वप्न में देखता है और आश्चर्य चकित हो, यह सोचता है कि यह संसार (गृहस्थी) तो ऐसा ही है। तब यह निश्चय करता है कि वैराग्य-निष्ठा से रहूँगा, और

एक पुण्य क्षेत्र में रहकर, वहाँ किसी एक समय, पूर्व में पुत्र-मित्र-कलत्रादियों के साथ आनंद के साथ रहने का स्मरण कर, उन कामनाओं में ऊभचूभ होकर, मन के द्रवित हो जाने पर, मस्त रहता है। किन्तु जाग जाने पर, किसी को न पाकर, शून्य में भ्रम में पड़ गया न, यह सोचकर निर्वेद के कारण लोटता रहा। अतः वश में न आने वाला तामस (तामसी प्रवृत्ति) ऐसी ही है न। जिस पदार्थ पर प्याज की गंध लग जाती है, क्या उस पर कस्तूरि का परमिल लग सकता है ? (नहीं) प्राकृत-विषय-वासनाओं में लिप्त रहने वाला मोक्षसुख का अन्वेषण कैसे कर सकता है ? आप का मायामय प्रपंच (जगत) ऐसा ही है। उसे जीता नहीं जा सकता। आपको ही हम पर दया दिखानी चाहिए हे श्री वेंकटेश्वर !

-106-

हे अनिरुद्ध ! जीव नित्य ही निद्रासमय में, अंतर्यामि और संतुष्ट बने हुए तुम में प्रवेश कर, उसमें तुम से सिरजोए गए स्वप्न देखकर, इंद्रिय द्वारों से लोक-व्यापारों को देखकर भ्रम में पड़ जाते हैं किन्तु तुम में रहकर भी तुम को जान नहीं पाते। जैसे गर्भस्थ शिशु माता के रूप को नहीं जानता, उसी प्रकार तुम्हें जान न सक, विद्याओं में तुम्हें ढूँढते रहते हैं। वे यह नहीं जानते कि तुम्हारा ठौर तो अपना अंतःकरण है। हम जैसे भी रहें तो क्या हुआ ? तुम माला के धागे के समान हो। अपने सन्निधान (समक्ष) रहने वालों को तुम्हीं को करुणा से देखना चाहिए हे श्री वेंकटेश्वर !

-107-

हे श्रीहरि ! इस पृथ्वी पर शुनक-सूकर आदियों के अपना अपना

जीवन सुखमय रूप से बिताने की व्यवस्था कर रहे हो। नरक-यातनाओं को भोगने वालों को "यातना-देह" प्रदान कर, छेदन-ताडन-आदियों से उनके अंगों को चिरवाते हुए पीड़ा भुगतने दे रहे हो। शरीर तो बंधन रहित है अतः इन सबका, सुख-दुखों को भोगना, तुम्हारे होने से सरल हुआ। तुम दयानिधि हो। तुम्हारी सेवा करने वालों का तुम्हीं कामधेनु-कल्पवृक्ष-चिंतामणि बनकर, फलते देखा है हे श्री वेंकटेश्वर!

-108-

हे श्रीकृष्ण! नियमपूर्वक 'गोपिका-वल्लभ' कहकर तुम्हारा जप करने वालों पर प्रसन्न हो रहे हो। ठीक है, तुम्हारे जारत्व का सम्रण करने से तुम्हें उत्साह होता हो अथवा ऐसे प्रसंगों का ध्यान करने से तुम्हारा मन पिघलता हो अथवा अहल्या-जार कहने पर इन्द्र के प्रसन्न होने के समान, तुम भी उपेन्द्र होने के कारण प्रसन्न होते हो। यह संभवतः तुम्हारा वंशानुचार-व्रत का निर्वाह हो, हम नहीं जानते। तुम्हें इतना परखकर पूछने की क्या आवश्यकता है? तुम्हारी पसंद का काम करना ही हमारा प्रयोजन है। संभवतः तुम्हें कामुकता प्रिय है। आज से हम तुम्हें श्री-भूमि-नीला-समेत कहकर, व्रजंगना-नाथ कहकर, अष्टमहर्षियों के प्राणनाथ कहकर, शतोत्तर-षोडश-सहस्र-कांतारमण (1116 कांताओं के पति) कहकर, स्तुति करेंगे हे श्री वेंकटेश्वर!

-109-

हे भूपतीश! भूलोक में मुझे कई बार पैदा कराने का क्या तुम्हारा कोई व्रत है? यह मुझे सब प्रकार से आनंद प्रदान करने की उदारता के

अतिरिक्त और क्या है ? तुम्हारी प्रकृति सतत मुझसे विलग न हो, क्या यह मेरे साथ हठ करना है ? मुझसे समस्त प्रकार के सुखभोगों का भोग कराने का मातृवात्सल्य नहीं तो यह और क्या है? इस प्रकार मेरा पालन कर सांसारिक सुखों को प्रदान करने पर, (उसका) उल्लंघन कर, मोक्ष की कामना का हठ मेरे लिए समुचित नहीं है। तुम्हारे नियम के अनुसार नित्य आचरण करना ही मेरा कर्तव्य है। फिर भी एक और निवेदन करूँगा, ध्यान से सुनो। मेरे मन में तुम्हे रहना चाहिए, आंखों से तुम्हारे महोत्सवों को देखना चाहिए, कानों से तुम्हारी कथाएँ सुनना चाहिए, मुख को तुम्हारे कीर्तनों का गान करना चाहिए। यही मेरे लिए परमपद है हे श्री वेंकटेश्वर !

-110-

हे श्रीनिवास ! कहते हैं, देह रूप को धारण करने वाली तुम्हारी माया है; इसमें चैतन्य तुम हो, जानबूझकर सुखदुखों का भोग करने वाले जीव हैं। इतने प्रकारों से प्राप्त होने वाले फल स्वर्ग और नरक है। ये कभी न टूटने वाले कर्मबंधन हैं। गृहस्थ के कर (लगान) जमा करने के बाद बचे लाभ हैं पुण्य और पाप। ये सब तुम्हारे लीला-विनोद हैं। इसका आदि कहाँ, अंत कहाँ ? इस प्रकार अनादि और सत्य बनकर यह जगत् विद्यमान है। इसके अर्थ को समझना मेरे सामर्थ्य के परे की बात है। अब और क्या निवेदन करूँ ? तुम्हारी इच्छा और हमारा भाग्य हे श्री वेंकटेश्वर !

-111-

हे परमेश्वर ! यह शरीर मेरा रथ है। मेरे पुण्य और पाप ही घोड़े हैं। मेरी आशाएँ ही लगाम हैं। काम-क्रोध रूपी आयुधों को लेकर, जन्म-परंपराओं में, इह-परलोकों में संचरण करने वाला विजयपुरुष हूँ मैं। तुम्हें जगन्नाथ कहते सुनकर, अब तुम्हारी सेवा की है। सुज्ञान धन रूपी पगार (वेतन) निश्चित कर, मेरा पालन करो। इतने दिन तुम्हारी मायाओं में विचरण करने वाला मर्मज्ञ हूँ। मेरा तुम्हारा सेवक बना रहना तुम्हारे हित में है हे श्री वेंकटेश्वर !

-112-

हे राधा-वल्लभ ! पहले कहा था कि तत्ववेत्ताओं को प्रणाम कर, प्रार्थना कर, पूछने पर वे तुम्हें इस ज्ञान का उपदेश देंगे, इससे पहले तुम अपनी आत्मा को स्वयं जान लो। इस प्रकार अर्जुन को गुरुजनों ने निर्देश कर बताया था। फिर कहा था कि समस्त यज्ञों में ज्ञानयज्ञ अधिक श्रेष्ठ है, उसमें समस्त कर्म-फल समाप्त हो जाएँगे, इसे तुम समझ लो। उसके बाद सब को स्वयं में वहन कर, यह कहा कि सब धर्मों को छोड़कर, मेरी शरण में आने वाले की मैं रक्षा करूँगा। यह प्रतिज्ञा कर, इसे किसी को न बताने का आदेश दिया, अन्य तत्वों को छोड़ केवल तुम्हारी ही सेवा करने का नियम बनाया। इसलिए केवल जानियों को ही कर्म न करने पर दोष नहीं लगता। द्विज तुम्हारी आज्ञा के अनुसार कैंकर्य (सेवा) करते हैं। इसलिए कर्माचरण उनके लिए बंधन नहीं है। अपनी लगाई उलझन को तुम्हीं ने सुलझाया है न हे श्री वेंकटेश्वर !

-113-

हे पांचजन्यधारी ! अनादि काल से ही जीवों को न छोड़ सक (जीवों से अलग न रह सक) उनकी आत्मा में रहते हो। वह सबसे बड़ा लाभ है। अब और क्या ढूँढूँ ? जीव तो अनित्य है। उनके लिए चिंता मत करो। तुम्हारी लीला के लिए शरीरों को धारण करने वाले हैं। इसलिए प्राकृत-विकार रूपी सुख-दुखों को भोगना समुचित ही है। प्रभु के कामों में दास का कुछ भी हो जाए, उसके लिए प्रभु ही जिम्मेदार है। तुम्हीं बचा लोगे, इस लिए डरने की कोई बात नहीं है। तुम पर विश्वास रखकर, निर्भीकता और उदासीनता से युक्त होकर रहना चाहिए। तुम्हारे दास वैष्णवों के लिए परमपद निश्चित है। आढ्य बन तुम्हें भूलने वालों के लिए जगत् ही सब कुछ है। ऐसे लोगों के साथ नहीं रहना चाहिए। प्रपन्न लोगों के लिए तुम्हीं रक्षक हो हे श्री वेंकटेश्वर !

-114-

हे पुराणपुरुष ! तुम अप्रतिहत प्रताप से युक्त हो। अवाप्त-सकल-कामनाओं वाले हो। अघटनाघटना-समर्थ हो। अपार कृपानिधि हो। अशरण शरण्य हो। असंख्य-कल्याण-गुण वाले हो। ऐसे तुम अब्ज-भवांड को अपने चरण के नख से खरोचने के कारण, वह पानी बन बह उठा। तुम्हारे चाहने पर, अर्जुन की प्रतिज्ञा-पूर्ति के लिए, दिन रात में बदल गया (सैंघव-वध के समय)। ऐसी हैं तुम्हारी महिमाएँ। घटाकर्ण ने निवेदन किया तो उसे कुबेर का पट्टण प्रदान किया। सरयूतीर पर परमपद का वितरण किया। अब शेषाचल पर (स्थित होकर) वर देते

रहते हो। तुम करुणा दिखाओगे तो असाध्य ही क्या है ? यह तुम्हारे लिए सहज है न हे श्री वेंकटेश्वर !

-115-

हे भक्त वत्सल ! आंखों के सामने दिखाई पड़ने वाला सबकुछ तुम्हारा ही हैं। सभी शब्द तुम्हारे अनंतनाम ही हैं। समस्त जल तुम्हारे श्री-चरणतीर्थ ही है। करोडों जीव तुम्हारे दास ही हैं। सोच-विचार में आए सभी तुम्हारे ध्यान ही हैं। हाथों से किए जाने वाले सब कार्य तुम्हारी सेवाएँ हैं। जगत् ही वैकुंठ है। यज्ञ तो महोत्सव ही है। समस्त संपदाएँ तुम्हारे उपकरण ही हैं। ऐसा सोचकर ही तो भागवतों ने भव को जीत लिया था, इह और पर (लोक-सुख) को प्राप्त किया हे श्री वेंकटेश्वर !

-116-

हे गदाधर ! बुद्धिमान व्यक्ति देह धारण के कारण तनिक भोगों को स्वीकार कर, और कुछ न चाहकर, अंतरंग से समस्त वस्तुओं की उपलब्धि तुम्हारे चरणों को ही मानकर संतृप्त होता है। एकांत में या गृहस्थी चलाते समय तुम्हारा ध्यान करते रहना योग का रहस्य है। यही तपस्या है। इसी में सकल सिद्धियां संप्राप्त होती हैं। पूर्व में मुनिजन इसी प्रकार तुम को भजकर महामुनि बने। कुछ लोग इस मार्ग से कुछ न चाहकर, तुम्हारी शरण में आकर, तुम्हारी सेवा कर, मुक्त हो गए। इसलिए तुरंत सेवाएँ करने का उद्योग (प्रयत्न) करना जीवों का कर्तव्य है। उसके बाद रक्षा करना तुम्हारा काम है हे श्री वेंकटेश्वर !

-117-

हे त्रिगुणातीत ! चतुर्भुज वाले ! अगोचर ब्रह्म को कोई दिखा नहीं सकता। गोचर तुम्हारी मायाओं को कोई रोक नहीं सकता। विद्याओं में तुम्हारे बारे में कहा गया कि तुम भक्त-सुलभ हो, इसे श्रुतिमधुर रूप से सुनना, नेत्र-पर्व के रूप में तुम्हारी मूर्तियों के दर्शन करना, तुम्हारे रूप को मन में सोच पाना, हाथों से तुम्हें प्रणाम करना, तुम्हारे नामों का जाप करना ही हमारा कर्तव्य है। इनके अतिरिक्त अन्य कोई उपाय नहीं है। सोचकर देखने पर आत्मा और परमात्मा के दर्शन असाध्य है। चाहकर करने पर कर्म तो बंधन बन जाएँगे। न चाहकर करने पर तुम्हें देखने में बाधक होंगे। इसलिए सब विधि से तुम्हारी शरण ही शुभप्रद है हे श्री वेंकटेश्वर !

-118-

हे रुक्मिणी वल्लभ ! कहते हैं कि महापातक करने वाले जीव पाषाण बन, वृक्ष बन, तृण-गुल्म-लता-आदि बनकर जन्म लेते हैं। समस्त जगत में ये ही भरे हुए हैं। ब्रह्मांड में पाप भरा हुआ है। यह बताओ न कि अहल्या तुम्हारे चरण-स्पर्श से कैसे पाषाणत्व को छोड़ पवित्र बन गई ? ऐसे इन चराचरों में अंतर्यामि बन, भरे रहोगे तो इन जीवों के पाप तभी निवृत्त होकर, वे बाधितानुवृत्ति से हैं। या नहीं तो उनके बंधनों को दृष्टिगत न होने देकर, अपनी लीला के कैंकर्य (सेवा) के रूप में स्वीकार कर रहे हो या अपने ध्यान को रूपायित कर रहे हो हे श्री वेंकटेश्वर !

-119-

हे देव-चूडामणि ! आप के स्वरूप को सीमा में बांधकर नहीं जान सकता। न जान सकूँ तो मुझे ब्रह्मज्ञान कैसे प्राप्त होगा ? शास्त्रमार्ग से युक्तियाँ ढूँढने पर, वे बढ़ते ही जा रहे हैं। उनकी कोई अवधि (सीमा) नहीं है। आपकी गरिमा का निश्चय कैसे किया जा सकता है ? आपके मार्गों को अज्ञात समझकर संदेह करना क्यों ? सब प्रकार से आपके दास बनकर रहना ही श्रेयोदायक है। यह निश्चय कर कहा था कि वही सरल उपाय है। पूर्व के गुरुजनों ने इसीलिए तुम्हारे चित्त के द्रवित हो जाने तक तुम्हारी सेवाएँ कीं। यही परतत्वज्ञान का मूल है, ऐसा मेरे मन ने सन्नुति (स्तुति) कर, पतिव्रता-भाव से दास्य करने के लिए कंकण बांध लिया है। यह मेरा निवेदन है हे श्री वेंकटेश्वर !

-120-

हे लक्ष्मीवल्लभ ! कहते हैं कि तुम अजांड के आधार-भूत कूर्म हो। तिस पर तुम्हारे दास शेष के फणों पर समस्त लोक स्थित हैं। आदिवराह बने तुम्हारी दाढ पर भूमि अवस्थित है। मत्स्यावतार में तुम्हारे द्वारा वेदों का उद्धार हुआ। समस्त ऐश्वर्यों का कारण श्रीदेवी (लक्ष्मी) तुम्हारी देवी है। सूर्यचन्द्र तुम्हारे नेत्र हैं। तीनों लोकों ने तुम्हारे चरणों की सेवा की। ब्रह्मा तुम्हारा पुत्र है। ऐसे ब्रह्मांड तुम्हारे रोमकूपों में असंख्य हैं। ऐसा देव और कौन है ? तुम्हारी कीर्ति और प्रताप की बराबरी कहाँ ? हे श्री वेंकटेश्वर !

-121-

हे तुलसीवल्लभ ! इंद्रजाल का प्रदर्शन करने वाला शून्य में समुद्र के जैसा तैरता है। दिवांध (उल्लू) दिन को रात समझते हैं। भ्रम में पड़ा व्यक्ति रज्जु (रस्सी) को सर्प समझता है। तुम्हारी माया से मोहित व्यक्ति, तुम्हारे प्रभाव को जान न सक, उसे अपनी सामर्थ्य समझकर अहंकार करता है। तुम्हारे अवतारों को मानुष समझता है। ऐसे लोगों को तुम्हारा परतत्व समझ में नहीं आता। तुम्हारे सिरजोए नास्तिक लोगों को समझाना किनके बस की बात है ? आप ही करुणा दिखाएँ तो सब मधुर बन जाएगा हे श्री वेंकटेश्वर !

-122-

हे सामगानप्रिय ! लोकरक्षा के लिए आप ने राम-कृष्ण के अवतार धारण किए थे। कर्मपाशबद्ध लोग उन्हें अपने बराबर का समझते हैं। वे आपकी बराबरी कैसे कर सकेंगे ? जो आप को सर्वोत्कृष्ट नहीं मानते, उन्हें ये सब पसंद कैसे आएंगे ? सर्पदष्ट लोग जो भी खाएं, स्वादहीन लगने के समान, माया-रूपी सर्प (के विष के) सिर चढ़ जाने पर, अपने आप को (अपनी सामर्थ्य को) न जानकर, आप को अपने बराबर का समझते हैं। हाय, हाय। (उनकी बुद्धि का) क्या कहूँ ? आप को सकलरक्षक मानकर, महापुरुष आप के प्रति तपस्या कर, महत्व को प्राप्त कर रहे हैं। आपकी महानता का इसी को दृष्टांत माना जा सकता है हे श्री वेंकटेश्वर !

-123-

हे श्रीवत्सांक ! तुम बलवान (समर्थ) हो। तुम जैसा करोगे, वैसा ही होगा। गौतमी नदी को प्राप्त शाप के परिहार के लिए शबरीस्नान को कारण बनाया। यह कैसा विचित्र (विषय) है ? ब्रह्मर्षि दुर्वासा की विपदा को दूर करने के लिए अपने भक्त अंबरीष को कारण बनाया। हीनता और अधिकता का विचार करें तो (दोनों में) कितना अंतर है ? अपने दासों के प्रभाव के बारे में लोको को जताया। तुम्हारी महिमा का कैसा (किन शब्दों में) वर्णन करें हे श्री वेंकटेश्वर ? !

-124-

हे ताटकांतक ! मैं राजस-तामस गुणों में फंस कर मदोन्मत्त बना हुआ हूँ। मैं कब बुद्धिमान बन सकूँगा ? पूर्व-जन्मों में अपने भोगे सुख-दुखों का स्मरण कर सही, कुछ सुधर जाना चाहूँ तो पूर्व-जन्म का स्मरण नहीं है। नरक यातनाओं के बारे में सोचना चाहूँ तो उन्हें कभी का भुला दिया। पृथ्वी पर शुनक-सूकर आदियों को और सांसारिक यातनाओं को भोगने वालों के तर्जन-भर्जन आदि को देख विरक्त होना चाहूँ तो वह पुराण-वैराग्य ही होगा, दृढ (शाश्वत) नहीं होगा। मेरी मूढ़ता के बारे में क्या विचार करोगे ? सबके लिए तुम्हीं प्रेरक हो अतः तुम्हारी आड (शरण) में आया हूँ। तुम्हीं मुझे शुद्ध-सत्व-संपन्न बनाओ न हे श्री वेंकटेश्वर !

-125-

हे सुबाहु-दैत्य-मर्दन ! मंत्रसिद्धि के लिए आकंठ जल में रहना चाहकर, ऋषि बनने के लिए वन में तपस्या करना चाहकर, कामनसिद्धि के लिए सत्वौषध बनाकर, उनका सेवन करने की सोचकर, सिद्ध-गंधर्व-पद प्राप्त करने के लिए महायोगों की साधना करना चाहकर, अनेक उपायों से, आशाओं से प्रयास करता रहा। अपने विवेक के बारे में क्या कहूँ ? ये सब निर्बंध रूपी बंधन ही हैं, मोक्षमार्ग के लिए उपयोगी नहीं हैं। चिरंजीवी बनकर रहने की आशा से कितने ही दिन जीवित रहूँ, तुम्हारे माया-जन्य जगत् में घूमना ही तो है, ब्रह्म-लोक को प्राप्त नहीं किया जा सकता। इनके लिए इतना प्रयास क्यों ? अब बुद्धिमान बन गया हूँ। तुम्हारी सेवा कर, तुमको ही गति समझकर रहने पर, तुम यथोचित उपाय कर ही दोगे न हे श्री वेंकटेश्वर !

-126-

हे यदुकुलतिलक ! कर्म करके तुम को देख पाना चाहें तो वह घन-तिमिर में दर्पण को देखने के समान है। विद्याएँ सीख कर तुम्हें प्राप्त करना चाहें तो वह बक-बंधन-प्रयास के समान है। तप करके तुम्हें वश में कर लेना चाहें तो वह शेष (सर्प) मस्तक पर के माणिक्य को ग्रहण करने के समान हैं। उपवास-व्रत के द्वारा तुम को समादृत करना चाहें तो वह समुद्र पर सेतुबंधन के समान है। दान कर तुम्हें आकर्षित करना चाहें तो वह आकाश को पाश से बांधने के समान है। तुम इन (सब) उपायों से असाध्य (वश में आने वाले) नहीं हो। तुम मात्र भक्ति के द्वारा ही साध्य

हो। इसके दृष्टांत हैं, तुम्हारी शरण में आए प्रह्लाद-नारद-शुक-भीष्म-विभीषण-करि (गजेन्द्र) शबरी-गुह (निषाद) अक्रूर-विदुर-हनुमान प्रभृति (आदि) परमभागवत हैं जो लोक में प्रख्यात हुए हैं। तुम एक को भजकर निश्चित हो रहेंगे हे श्री वेंकटेश्वर!

-127-

हे गोपाल-बालक! तुम को न जानने वाला शुष्क ज्ञान पाषाण-कंटक-क्रूर सर्प-वराह-शार्दूल-भल्लूकों से आक्रांत अरण्य के मध्य (भाग) के समान है। जहाँ तुम्हारे मंदिर न हो, ऐसा प्रदेश कठिन-कर्कश तिमिर से दुरवगाह (अगम्य) और पिशाच-शुनकों के आवासों के समान है। तुम्हें छोड़ अन्यों की पूजाएँ करना निविड-निर्घात-विद्युत्पात झंझामारुत-वर्षा से युक्त समुद्र-मध्य (भाग) के समान है। तुम्हारी कथाओं से रहित पुराण श्रवणभीकर-आकार वाले काक-धूक-कंक-गृघ्र-झिल्ली-युक्त पाषाण-गुफाओं की प्रतिध्वनियों के समान है। (उपरोक्त) सब को महात्मा लोग सोचते ही नहीं। तुम पर विश्वास रख, समस्त कल्याणों को तुम में ही प्रात कर लेते हैं। विवेकी बने तुम्हारे दासों के लिए यही उपाय है हे श्री वेंकटेश्वर!

-128-

हे पूतनोद्धारक! कहा गया है कि ग्रहण-काल में किया गया स्नान गंगा-स्नान के समान है। पुण्य क्षेत्रों में रहने वालों को ऋषि-समान बताते हैं। सत्पुरुषों के हाथ में रखे गए सुवर्ण को मेरु समान बताते हैं। कालकृत्य बने अनुष्ठान सफल होते हैं। सब में जो माहात्म्य है, वह तुम

में ही है। गंगाजल तुम्हारा चरण-तीर्थ है, ऋषिता तुम्हारा दास्य है, दान का फल स्वर्ण श्रीमहालक्ष्मी का प्रसाद है। अनुष्ठान-जप तुमहारे नाम स्मरण से सुलभ हो जाते हैं। ये सब तुम्हारे कारण ही हम को प्राप्त हुए। इन सब से हम परिपूर्ण बने हुए हैं। मक्खन हाथ में रखकर घी के लिए ढूँढना क्यों? पारसमणि के घर पर होने के बाद, (अन्यों से) स्वर्ण मांगना क्यों ? हमारे लिए तुम हो। बस, धन्य बन गए हैं हम हे श्री वेंकटेश्वर !

-129-

हे लोकनाथ ! मैं किसी से पूछकर ज्ञान प्राप्त करना चाहूँ तो ब्राह्मण शास्त्र के अधीन हैं। गृहस्थ (व्यक्ति) पुत्र-मित्र-कलत्र के अधीन हैं। राजा राष्ट्र के अधीन हैं। प्रधानी (प्रधान मंत्री) कार्य के अधीन हैं। जपिता (जप करने वाला) मंत्र के अधीन है। तपस्वी दैवाधीन है। इस प्रकार प्रत्येक व्यक्ति अपने मन को अपने कर्म के अनुकूल कर आचरण करता है। किन्तु तुम अकेले की सेवा करने से, तुम से सब कुछ प्राप्त हो जाएगा, ऐसा विश्वास उन्हें नहीं होता। वे मेरा प्रबोधन कैसे मान सकते हैं ? बीज एक रोपें तो पेड़ दूसरा कैसे उग आएगा ? वे तुम्हारे कृत्य (कार्य) हैं। मैं वैष्णव हूँ। आचार्यों के अधीन हूँ। तुम भागवतों के अधीन हो। मुझे करुणादृष्टि से देखो न हे श्री वेंकटेश्वर !

-130-

हे आदि-मध्य-अंत रहित वाले ! आकाश की तुलना भूमि से कर सकते हैं। परन्तु तुम्हारी अनंत महिमा का सानी नहीं है। समुद्र को

गिनकर मेरुपर्वत से तुलना कर सकते हैं। परन्तु तुम्हारे करुणा-समुद्र की बराबरी किसी से नहीं कर सकते। सूर्य के बराबर चंद्र को कह सकते हैं। तुम्हारे कोटि-सूर्य-तेज की तुलना नहीं है। बाडबाग्नि की अग्निदेव से तुलना कर सकते हैं। तुम्हारी प्रतापाग्नि को किसी से उपमित नहीं कर सकते। नक्षत्रों को ज्योतिष शास्त्र के अनुसार गिन सकते हैं किन्तु तुम्हारे अपार नामों के प्रभाव की सीमा नहीं बता सकते। एकोदक (प्रलय) होने पर केवल तुम ही नारायण होकर रहते हो। तुम ही अपने बराबर हो। तुम्हारी कहाँ तक प्रशंसा करें ? सब के लिए तुम ही एकमात्र गति हो हे श्री वेंकटेश्वर !

-131-

हे भक्त चिंतामणि ! मैं विलास-संकल्प से पीड़ित होकर, अज्ञान रूपी गहरे पानी में, माया वर्षा के आगमन में तपस्या कर रहा हूँ। अंगना-आलिंगन के आकाश-मध्य रहकर, वदन रूपी चंद्र पर दृष्टि रखकर, ऊर्ध्व बाहु हो तपस्या कर रहा हूँ। अष्टाशीति बंध और आसनों में रहकर, मदन-देवता के आगमन पर आहें भरते हुए, प्राणायाम से तपस्या कर रहा हूँ। क्रोधाग्नि पातक-रूपी ईंधन को सुलगाकर तपस्या कर रहा हूँ। द्रव्यार्जन-चिंता आदि काम्य-कर्म रूपी फलाहारी होकर तपस्या कर रहा हूँ। आशा-पर्वत पर अतिदैन्य रूपी सूल्य (सुई) के अग्रभाग (नोक) पर रहकर तप कर रहा हूँ। गृहस्थी नामक पुण्य-क्षेत्र में पुत्र-दारा नामक साकार-निधियों को आंखों के सामने देख-देखकर, ध्यानयोग से युक्त हो तपस्या कर रहा हूँ। विचार कर देखने पर इतने प्रकारों से रहने वाले तुम ही हो। इन समस्त तपस्याओं को कल्पित करने

वाले तुम ही हो। तुम्हीं गुरु, दैव और रक्षक हो। तुम्हीं हम पर करुणा दिखाओ न हे श्री वेंकटेश्वर !

-132-

हे दयानिधे ! मेरा मान करके, भांडागार खोलकर मुझे भूरिदान कर देने पर, समस्त वैष्णवों ने तुम पर भक्ति-संपदा को अपने-अपने आत्ममंदिरों में निक्षिप्त कर रख लिया। तुम्हारी स्तुतियों की गठरी बांधकर अपने वदन-सौधों में सुरक्षित रख लिया है। तुम्हारे नामांकित देह पर चाहकर, तिरुमणि के चिह्न लगा लिए। तुम्हारी मूर्ति के ध्यान को मनरूपी दीवारों पर चिपका लिया। तुम्हारे पूजांगों को मुट्ठियों में लिए हुए हैं। मैं भी उनमें से एक हूँ। तुम्हारी कृपा दृष्टि हम पर बरसी। अब हमको अनावृष्टि का दोष नहीं लगेगा। तुम्हारे धर्म से परिणाम (स्वर्ग) प्राप्त करेंगे हे श्री वेंकटेश्वर !

-133-

हे विजयप्रकाश ! कार्यातुर हो मैं प्रेम से बार-बार तुम्हारा स्मरण कर रहा हूँ। विचार कर देखें तो ब्रह्मदेव में जो सामर्थ्य है, वह तुम ही हो। इन्द्र में ऐश्वर्य तुम ही हो। सूर्य में तेज तुम्हीं हो। चंद्र की कलाएँ तुम्हीं हो। वायु में वेग तुम ही हो। समस्त देवताओं का प्रभाव तुम ही हो। समस्त तीर्थों के पुण्य और प्रभाव तुम ही हो। यज्ञ-दान-कर्मानुष्ठान तुम ही हो। ऐसे तुम्हें कैसे प्राप्त किया जा सकता है ? मैं मात्र मानव देहधारी हूँ। तुम कहाँ और मैं कहाँ ? तुम्हारी सेवा कर, अपना बडप्पन जताने के लिए तुम्हारा दास कहलाऊँगा पर तुम्हारे दर्शन कर पाने की सामर्थ्य कहाँ ?

अपनी जल्दबाजी पर मैं स्वयं हंस रहा हूँ। मेरी आशा को समझकर, मुझ पर दया दिखाकर, रक्षा करो न हे श्री वेंकटेश्वर !

-134-

हे मधु-कैटभ का अंत करने वाले ! हम जंतु हैं, आहार-निद्राओं में ऊभ-चूभ होते हुए, कभी कभार यह सोचते हैं कि तुम हमारा पालन करने वाले हो। हमारा ज्ञान अल्प और अनाचार-बहुल लग रहा है। हमारा अस्तित्व रंगबिरंगे वृक्षों के बीच आक (मदार) के पेड़ के समान है। अपने दासों के प्रति पता नहीं, तुम क्या करोगे ? सदा तुम्हारी सेवा न कर पाने के कारण चिंतित हैं। गुरुजन कहते हैं कि तुम निर्हेतुक (बिना कारण के ही) दयानिधि हो। अपने बिरुदों का स्मरण कर, हम पर कृपा-कटाक्ष प्रसरित करो न हे श्री वेंकटेश्वर !

-135-

विभीषण को स्थापित (सिंहासनारूढ) करने वाले ! इस मनुष्य लोक में रवि-चंद्र-ग्रह-तारकों के कारण उदय और अस्त काल और पूर्व-दक्षिण-पश्चिम-उत्तर (दिशाएँ) बनी हुई हैं। इंद्रादियों को ये ही देवमान से शतगुण (सौ गुना अधिक) हैं। उसके आगे ब्रह्मा का ब्रह्ममान अनंत गुना अधिक है। इसके लिए ज्योतिष शास्त्र में बताए जाने वाले काल का एकवाक्यता की कल्पना कर कैसे जोड़कर कहा जा सकता है ? शास्त्रों को झूठा नहीं बता सकते। तब इनके कारण तुम्हीं कालात्मक हो, यहाँ और वहाँ इतने प्रकार से दरसाने वाली स्वतन्त्रता (स्वच्छंदता) के दर्शन होते हैं। यह निश्चित रूप से स्पष्ट हो गया कि समस्त जगत

तुम्हारी महिमा के कारण अवस्थित है। यह निश्चित है कि सब कुछ तुम से कल्पित (सर्जित) होकर चालायमान है। उत्पन्न करने और रक्षा करने के लिए तुम एकमात्र कर्ता हो। परमेश्वर हो। अघटना-घटना-सामर्थ्य तुम में ही है। तम्हारी करतूतों की प्रशंसा कर रहे हैं हे श्री वेंकटेश्वर !

-136-

उद्धव द्वारा प्रशंसित हे प्रभू। समस्त लोगों के लिए आहार ग्रहण करते समय उन उन पदार्थों की रुचियाँ जिह्वा के लिए एक समान है। तरुणी-भी एक प्रकार की है। नाक से सूंघा जाने वाला परिमल, नेत्रों से देखा जाने वाला ज्ञान एक ही प्रकार के हैं। सोचने पर लगता है कि अनुभूति में एकसूत्रता है। जो हो, तुम्हारा निर्माण अति आश्चर्यप्रद है। सब में कुशल हो तुम हे श्री वेंकटेश्वर !

-137-

हे कंस का मर्दन (संहार) करने वाले ! तुम आदि विष्णु हो। तुम्हारा आत्मसंभव (पुत्र) ब्रह्मदेव अपर विष्णु है। उसके द्वारा सिरजोए गए सभी लोग वैष्णव ही हैं। कहते हैं कि "सर्वं विष्णुमयं जगत्"। अतः सब आपके अधीनस्थ ही हैं। अपने-अपने पूर्व-जन्म के अनुरूप कुछ लोग शैव बनते हैं तो कुछ मायावादी। इसमें एक और विशिष्टता भी है। अन्य देवता, अन्य धर्म, अन्य साधन, अन्य प्रयोजनों को छोड़कर तदेकनिष्ठा (एकाग्रता) से तुम्हारी सेवा करने वाले लोग परमवैष्णव हैं। विदुर के अंतरंग (सखा) हैं। अन्य धर्म वाले, तुम्हें जानकर या न जानकर भी, अन्य देवताओं की जो सेवा करते हैं, वे भी तुम्हारी हैं। क्योंकि समस्त देवता तुम्हारे अंश-संभूत हैं हे श्री वेंकटेश्वर !

-138-

हे अहल्या के शाप का विमोचन करने वाले ! वेद कहते हैं कि तुम समस्त (सृष्टि) के लिए आधारभूत हो। तुम्हारा आधार क्या है, यह मैं नहीं जानता। कहते हैं कि तुम ही परब्रह्म हो, यह पुराण बताते हैं। अन्य मूर्ति कौन है, यह मैं नहीं जानता। कहते हैं कि तुम किसी में लिप्त रहने वाले नहीं हो। यह जगत् किसके लिए प्रकाशित हो रहा है, वह दिखाई नहीं पड़ता। इन सब पर विचार कर, देखना चाहें तो तुम अभेद्य हो। ऐसे तुम्हारी महिमा के कारण हम आश्चर्यचकित हो जाते हैं, पर किसी एक निश्चय पर पहुंचना हमारी सामर्थ्य के परे है। तिल में स्थित तेल के समान, काष्ट में स्थित अनल के समान, पुष्पों में स्थित परिमल के समान, बीजों में स्थित वृक्षों के समान - इस प्रकार जगत में तुम और तुम में जगत अवस्थित हैं, बाह्य-अभ्यंतर में तुम परिपूर्ण रूप से अवस्थित हो। तुम जैसा चाहो, वैसा रहो। तुम्हारी शरण लेकर जीते रहेंगे हे श्री वेंकटेश्वर !

-139-

हे कल्कि अवतार वाले ! तुम्हारी सेवा करने वाले साधुजनों के लिए वरदहस्त, भीत-दीन जनों के लिए अभयहस्त बताते हुए साकर स्थित हो। शत्रु-संहार के लिए एक हाथ में शैलचक्र को, विजयघोष करने के लिए दूसरे हाथ में शंख को लिए हुए हो। अब हमें कल्पना कर, लालायित हो खोजने के लिए रखा ही क्या है ? बिन मांगे सर्व-अर्थ प्रदान करने के लिए अंतर्यामि बन, प्रतीक्षारत हो। जिस लता को ढूँढने गए, उसीके हथेली में आ जाने के समान, मांगे गए अर्थ के स्वयं प्राप्त होने के समान, जहाँ स्नान करने जा रहे थे उसी तीर्थ के स्वयं सामने

आने के समान, पूर्व में न किए पुण्य के फलों के हाथ लगने के समान तुम समस्त तिरुपतियों में दिखाई पड़ रहे हो। समस्त जन के लिए, तुम्हारा आकार जीवन का मार्ग बता रहा है हे श्री वेंकटेश्वर!

-140-

हे रविचन्द्र नयनवाले! अपने उत्साह के कारण तुम्हारे प्रत्यक्ष दर्शन चाहते हैं। किन्तु प्रत्यक्ष हो जाओगे तो कहाँ देख पाएंगे? कहते हैं, तुम कोटि सूर्य प्रकाश युक्त हो। एक सूर्य ही हमारी दृष्टियों को चौंधिया देता है। तुम को कैसे देख पाएंगे, यही आश्चर्य है। श्रीवेंकटाद्रि पर तुम्हारे रूप के दर्शन किए हैं। वही हमारे लिए ब्रह्मसाक्षात्कार है हे श्री वेंकटेश्वर!

-141-

हे जगत के प्राण! ब्रह्मचर्य (व्रत पालन) से प्राप्त फल को, गृहस्थाश्रम में प्राप्त पुण्य को, वानप्रस्थ धर्म (के आचरण) से जुटाई विशिष्टता को, यति (धर्म) की निष्ठा (पूर्वक पालन) से प्राप्त आनंद को, इन सब को तुम्हारे दास्य (करने) से प्राप्त किया है। नाना वेदों के पाठ से प्राप्त महत्व को, तुम्हारे नामोच्चारण से उपलब्ध किया। लोकों के समस्त सुखों का तुम्हारे मंदिर के निकट उपभोग किया। अमरता को वैष्णवत्व में प्राप्त किया। सभी तीर्थों में स्नान करने का फल ज्यों गंगास्नान में अवस्थित है, सभी मंत्र-जप ज्यों प्रणव (ओंकार) में लग्न हैं, तपस्याओं के महत्व ज्यों भक्ति द्वारा प्राप्त होते हैं, वैसे ही ये सब मुझे तुम्हारी कृपा से प्राप्त हुए न हे श्री वेंकटेश्वर!

-142-

हे कूर्मावतार वाले ! ब्रह्मांड एक है, ब्रह्मा नौ हैं, रुद्र ग्यारह हैं, देवता तैंतीस करोड हैं। इनमें किनका अनुसरण करें ? इन सब का मूल-कारण आदिमूर्ति तुम हो, यह मानकर तुम अकेले की सेवा की। इससे (अन्य) सभी तृप्त होकर, हम पर प्रसन्न होंगे। यह वैसा ही है जैसे वृक्ष के मूल में डाला गया जल, (शाखाओं के) छोरों तक पहुंचकर, तृप्त कर, फलता है। उसी प्रकार आपके सृजित सभी देवता आपको (प्रसन्न) देखकर, हम पर प्रसन्न होंगे। बहुमार्गों पर लग जाने से मन विचलित हो जाता है। एकाग्रबुद्धि से आपकी सेवा करेंगे हे श्री वेंकटेश्वर !

-143-

समुद्र पर सेतु बांधने वाले ! तुम से तुम्हारा संकल्प रूपी प्रकृति, प्रकृति से महत्, महत् से अहंकार, अहंकार से मन, मन से सकल इंद्रिय और पंचतन्मात्राएं क्रमशः उद्भूत हुईं। उन तन्मात्रओं के कारण पंचमहाभूत उत्पन्न हुए। उनसे चौबीस तत्व पैदा हुए। उन चौबीस तत्व रूपी जीवों में तुम अवस्थित रहकर, प्रकृति के समस्त भोगों का उपभोग करा रहे हो। तुम प्राणबन्धु होकर लोकों पर शासन कर रहे हो। तुम्हारी विनय करेंगे। तुम्हारे लिए प्रियवचन कहेंगे। गुरुमुख से और तुम्हारी कृपा से तुम्हें अपना स्वामी जान लिया है। तुम ने जो वृक्ष लगाया, उसे तुम्हीं को सफल बनाना चाहिए। उसके बाद, सद्बुद्धियों से अनुगृहीत कर, हमें कृतार्थ बनाओ हे श्री वेंकटेश्वर !

-144-

वालि-निग्रही ! तुम पर भक्ति रखना "तुम रक्षा करोगे" इस आशा से और स्वार्थ-भाव से ही है। हम से न बिछुड़कर अंतर्यामी होकर हम में रहना, हम पर किया जाने वाला परमोपकार है। मैं अस्वतंत्र हूँ। तुम स्वतन्त्र हो। मैं अगुण (गुणहीन) हूँ। तुम गुणातीत हो। मैं अशक्त हूँ। तुम सर्वशक्तिमान हो। मैं तुम्हें धारण नहीं कर सकता। तुम मेरा धारण (वहन) कर सकते हो। कौशल से किए गए मेरे अपराधों को गिनने की आवश्यकता नहीं है। अपनी कीर्ति और प्रताप को गुनकर, अपनी महिमाओं को प्रकाशित कर, मेरा पोषण (रक्षा) करना तुम्हारे लिए पुण्य का कार्य है। रीछ के लिए अपना अयाल भार स्वरूप नहीं माना जा सकता। लता के लिए फल भार स्वरूप नहीं होते। कामधेनु को अपने सींग वाले नहीं हो सकते। हमारे चिरभार को तुम्हीं वहन कर लो न हे श्री वेंकटेश्वर !

-145-

हे मारीच-संहारी ! तुमने धर्म-संस्थापन के बहाने, अनंत-अवतार धारण कर, अपराध करने वाले रावण आदियों का संहार किया। यूँही बैठे जीवों से पाप कराना क्यों ? उन्हें राक्षसों के रूप में पैदा करना क्यों ? तुम्हें (भूलोक में) जन्म लेना क्यों ? पहले से ही (प्रारंभ में ही) उन्हें सुज्ञानी बनाते तो तुम्हारी क्या कमी होती ? तुम स्वतन्त्र हो। कहते हैं, तुम्हारे बिना जगत में तृण भी नहीं हिलता। तुम से बढकर और काम ही क्या है ? तुम गलती नहीं करोगे, ऐसा सोचकर हमने एक निश्चय कर

लिया। संभवतः यह (संदेश) देव-तिर्यक् मनुष्य-स्थावर आदियों को तुम्हारे अवतारों की सेवा करके, जीवन-यापन करते रहने का उपकार है न हे श्री वेंकटेश्वर।

-146-

हे श्रीमन्नारायण ! पुण्यीजनों के साथ श्रीरंगपट्टण जाकर, कावेरी नदी में स्नान कर, पापों को छुड़ाकर, रंगनगर जाकर, सप्त प्राकारों को पारकर, उसके बाद आपके श्रीयुक्त मंदिर में प्रवेश कर, गरुडस्तंभ को साष्टांग प्रणाम कर, अनेक सुवर्ण-निर्मित शोभनालंकार बने तोरणों को पार कर, स्वर्ण द्वारों तथा बारह आल्वारों को प्रणाम कर, अनंत भूषण वाले, गर्भगृह-द्वार पर खडे होकर, जय-विजय की सेवा कर, सहस्र-फणि-फण मालाओं से अलंकृत भोगीन्द्र (आदिशेष) पर लेटे हुए, नीलमेघवर्ण वाले तुम्हारे आकार को निहारकर, तुम्हारे सिरपर, मरकत-माणिक्य-पद्मराग-वज्र-वैडूर्य-गोमेधिक-पुष्यरागों से समुन्नत किरीट को, कर्ण-युगल में मोतियों से जडे मकर कुंडलों की प्रकाश-किरणों को, तिरुमणि-श्रीचूर्ण से संवारे गए ललाट को, गंध-कस्तूरि-कर्पूर पुते वक्ष को, हार-केयूर-कंकण-कटक-अंगुलीयको को, स्वर्ण-यज्ञोपनीत को, स्वर्ण कंठहार को, चरणों पर स्वर्ण-नूपुरों को, नवरत्नमय भूषणों से युक्त दक्षिण-हस्त को, सिर के नीचे (सिरहाने) वामहस्त को, अजानु-बाहु-युगल के बीच, उर पर विलसित श्री महालक्ष्मी के परकांता के समान तुम्हारे चरण दाबते रहने पर, दसहजार करोड सूर्यप्रभाओं से युक्त दिव्य-मंगल-विग्रह वाले तुम्हारे औदार्य को अपने नेत्रों की भूख मिटाते हुए,

देखकर, रोमांचित-पुलकांकित शरीर वाले होकर, तुम्हारे दिव्य-पाद-पद्मों को अपने हृदयकमल में स्थित कर, प्रणाम कर, स्तुति कर यह मानकर कि तुम सकल-लोक-कर्ता हो, अच्युतेश्वर हो, अष्टभुजवाले नारसिंह हो, उत्पत्ति-स्थिति-लय के अधिकारी हो, शंख-चक्र-गदा-खड्ग-प्रमुख (आदि) से युक्त बाहुओं वाले हो, अलिमेलु मंगा के पति हो, तुम्हारी सेवा की है। रक्षा करो, पालन करो हे श्री वेंकटेश्वर!

-147-

हे अखिलांडकोटि ब्रह्मांडों के नायक! हे आदिमध्यांत-रहित! अंबुजासनादि से वंदित! श्री अलिमेलु मंगा के मनोहर! सुना, तुम्हारे नाम अनंत हैं। तुम्हारे जन्म आवाङ्मानस गोचर है। कहते हैं, तुम्हारे गुणों को समझने में कोई समर्थ नहीं है। तुम्हारे नाभिकमल से जन्मे ब्रह्मा भी भी ब्रह्मनाल का पता न लगा सका, शतवर्ष घूमकर, तुम्हारा नामस्मरण करके ही तुम्हें देख पाया। तुम्हारे दासों ने विशेष रूप से तुम्हारी विशेषताएँ बताई, उनका कहाँ तक वर्णन करूँ? बार-बार तुम्हारे नामों का निवेदन करूँगा। ध्यान से सुनो। सुना है, हे श्री पुरुषोत्तम![1] श्रीकूर्म, लोलार्क, वैकुंठ, रंगनाथ, सर्पवरं, कनकगिरि, कनकांबरगिरि, गोवर्धनगिरि, अंजनगिरि, हस्तिगिरि, आल्वारगिरि, पंडरंगगिरि, गरुडगिरि, मंगलगिरि, नीलगिरि, रामगिरि, हिमगिरि, वेंकटगिरि, श्वेत द्वीप, हिरण्याद्रि, कुतांद्रि, वृषभाद्रि, मदनाद्रि, घटिकाचल, श्रीरंग, प्रमोदूत, सत्यलोक, आकाशनगर, शबरीप्रकाश, द्वीपांतर, पंपातीर, उत्फल्लापद, अगस्त्याश्रम, शरणागत, कदलीवन, क्षीराब्धि, बदरिकाश्रम, नारायणाश्रम, नैमिशारण्य, विंध्यारण्य, महारण्य, सुब्रह्मण्य, बृंदावन,

भक्तिस्थल, कपिस्थल, पादस्थल, श्रीनिवासस्थल, अवंति, वज्र, कालिकाहृदय, गया, गंगासागर, चक्रवर्धन, सागरसंगम, चित्रकूट, मणिकूट, हरिक्षेत्र, कुरुक्षेत्र, अहोबल, श्रीवैष्णव, हिमवंत, चूर्ण प्रतीक, कपिल, हाटक, निखिल सागर, मयूर, श्रीमद्द्वार, कुरुकायक, भद्रनंदन, रविमंडल, आदिशंख, पूनमंबर, भीमशंख, मर्धाचल, वृद्धाचल, नासिकात्र्यंबक, हरिहरेश्वर, अलघरि, चेन्नेकेश्वरि, खेताद्रि, तोताद्रि, श्रीरामं, श्रीराघवं, दिवाभव, पाताल, शक्ति सागर, अग्निपुर, वटारण्य, अनंत, कुंभकोण, अयोध्या, प्रयाग, द्वारकावती, जिंहिला, ताम्रपर्णि, कंचि, सिंहाचल, आदि एक सौ आठ तिरुपतियों में अवतरित हुए। उन तिरुपतियों के दर्शन कर, सेवा करने में समर्थ नहीं हूँ। इतने तिरुपतियों के सेवा-फल (प्राप्त करने के लिए) तुम्हारी-तुम्हारी सहायता ही गति (शरण्य) है हे श्री वेंकटेश्वर !

-148-

उभय विभूति के हे नायक ! उभयविभूतियों में नित्य-विभूति-तीन लाख बत्तीस हजार योजन पार करने पर, उसके आगे अंडज-ब्रह्मांड को पार करने पर, आगे अमरावती-पट्टण, अमरावती पट्टण को पार करने पर, सूर्यमंडल, सूर्यमंडल को पार करने पर चंद्रमंडल, चंद्रमंडल को पार करने पर नक्षत्रमंडल, नक्षत्रमंडल को पार करने पर ब्रह्मलोक, ब्रह्मलोक को पार करने पर कारण-वैकुंठ, कारणवैकुंठ को पार करने पर प्रकृति, प्रकृति को पार करने पर विरजानदी, विरजानदी को पार करने पर परमपद, परमपद को पार करने पर अष्टाक्षरी नामक सरोवर है। उस सरोवर में एक कमल है। उस कमल में अतिविस्तृत मंडप है। उस मंड में हजार सिर, दो

हजार जिह्वाओं वाले आदिशेष के छत्र बनकर, शय्या बनकर रहने पर, भगवान लेटे हुए रहते हैं। श्रीमहादेवी और श्रीमहालक्ष्मी के चरण दाबते रहने पर, भगवान के समक्ष तिरुकोट्टारनंबी, तिरुमल नंबी, पेरियनंबी, तिरुकच्चि नंबी, मार्नूरु नंबी नामक पांच भागवतों (भक्तों) के तीनों समय स्वर्ण पुष्पों से पूजाएँ करते रहने पर, भगवान यों कह रहे हैं। मेरे दास निर्भीक हैं। वे अद्वय के अधिकारी हैं। वे वेदांतवेद्य हैं। मेरे दासों को मुझे जानना चाहिए, उन्हें मुझे नहीं जानना चाहिए। आकाश के फट जाने पर जोडा जा सकता है, भूमि के फट जाने पर जोडा जा सकता है, समुद्र के उफनने पर वेला बांधी जा सकती है, किन्तु भागवतों के प्रति अपचार नहीं करना चाहिए। वेद और श्रुतियाँ कहती हैं कि भागवतापचार दग्धपटल के समान है। वरवरमुनिमंत्र नामक बीज लाकर, परमपद रूपी आलवाल बनाकर, इन तिरुमंत्रों को गुलाबजल से अभिषिक्त कर, नहरें बनाकर, अष्टाक्षरी नामक अंकुर को रोप कर, सर्ववेदमंत्र नामक लता को फैलाकर, परिपूर्ण कटाक्ष नामक फूल के खिलकर, फलकर, फलित होकर, पंच-संस्कार से युक्त होने से मैं तुम्हें पहचान सकता हूँ। "अस्मद्गुरुभ्योनमः" नामक मंत्र के समान दूसरा मंत्र नहीं है। पूर्वाचार्यों के समान दूसरे आचार्य नहीं हैं। परमरहस्य के समान दूसरा रहस्य नहीं है। श्रीमहाविष्णु के समान अन्य देवता नहीं है। ऐसा मुझे जता दो न हे श्री वेंकटेश्वर!

-149-

हे आदि-मध्य-अंत रहित! अंबुजासन आदि से वंदित! वेदवेदांत वेद्य! ध्यान दो। हे देव! मेरा एक निवेदन है। ध्यान से सुनो। अतिघोर

संसारांधकार रूपी कानन में मेरे अज्ञान-जन्य जीव रूपी गज है। वह कैसा है ? आशा और मोह रूपी अन्य गज-समूह से युक्त होकर पंचेद्रियों के विषय-भोग आदि में आसक्त बनकर, काम क्रोधों में फंसकर, तापत्रयों के कारण आगे-पीछे न देखसक, ईषणत्रय रूपी घोर-वन दुर्ग-गहनों में फंसकर, रात-दिन अपरिमित तिमिर में फंसने पर, वह सन्मार्ग-संचार का पता नहीं लगा पा रहा है। ऐसे गज को पकड में लाने का एक उपाय है। वह कैसा संभव होगा ? तुम्हारी अनुमति नामक दिव्यपाश से, तुम्हारे विज्ञान नामक साथी-हाथी के साथ बांधकर, तुम्हारे कृपा-कटाक्ष रूपी (रस्सी) से बांधकर अरिषड्वर्ग नामक आशापाशों को लगाम बनाकर, तुम्हारी भक्ति रूपी स्तंभ से बांधकर, तुम्हारा नामोच्चारण-रहस्यार्थ रूपी चारा खिलाकर, तुम्हारा तिरुमंत्र नामक जल पिलाकर, भव-जरा रोग का हरण करने वाले आचार्य-थाली के प्रसाद रूपी निवाला खिलाकर, द्वय रूपी अयाल बांधकर, अष्टाक्षर रूपी घंटियां बंधवाकर, रामानुज-सिद्धांत रूपी बाजा बंधवाकर, कृष्णराहुत नामक माहूत को बिठाकर, भागवतों के झुंड में बांधकर, अन्य-किंकर-दोष-हठ रूपी तुलसी मालाओं को दीठ की मालाओं के रूप में बांधकर, अन्य (इतर) विषय रूपी भारी निगल (सांकल) से बांधकर, तुम्हारे परमार्थ रूपी अंकुश हो हाथ में लेकर, इधर-उधर हिलने न देकर, तुम्हारे दास-संसर्ग-गतियों के लीलाविनोद को अधिक शत्रुक्षय के रूप में देकर, कुशलता-पूर्वक पालन करने के लिए, चौदह जुडवे तालाबों को पार कराकर, उसके आगे बहु-पाप-हारी विरजानदी में स्नान-पान आदि करवाकर, परिशुद्ध-आत्मा वाला बनाकर, शंख-चक्र-पीतांबर-

वनमालिकाओं से अलंकृत कर, इंदिरा स्तन्यपान रूपी घुट्टी पिलाकर, सालोक्य-सामीप्य-सारूप्य-सायुज्य पद देने वाले हो, ऐसा लोगों के प्रशंसाकर, गुणगान कर, नाम लेने पर, सुनकर तुम्हारे अलिमेलुमंगा-लक्ष्मी समेत होने के कारण, तुम से अनंत निवेदन कर स्तुति करूँगा, गाऊँगा, नाचूँगा हे श्री वेंकटेश्वर !

-150-

हे अलिमेलुमंगा के स्वामी ! हे देव ! सुनो, मन देकर सुनो हे देव ! मेरे निवेदन को सुनो। निराकार और वायु रूप में स्थित जीव मातृगर्भ नामक ठौर से शुक्लपक्ष में शुक्ल-शोणित रूप में बदरीफल प्रमाण से, द्वितीय मासमें कुक्कुट (मुर्गी) के अंडे के स्वरूप में, तृतीय मास में मयूर के अंडे के स्वरूप में, चतुर्थ मास में नारियल के परिमाण में, पंचम मास में शोणित के अंडे के रूप में, षाण्मास में पंचतंत्रों से युक्त दशवायु के स्वरूप वाला होकर रहता है। लिंग शरीर वाले कर्मजीव के सूक्ष्म शरीर में पैठकर, तुमने मांस-शोणित को आहार बनाया। सप्तम मास में जीव को तत्वज्ञान से युक्त बनाया। अष्टम मास में जीव यह पहचानता है कि पूर्व में मैंने ऐसे पाप किए हैं। नवम मास में नारायण के ध्यान में तत्पर होते हुए, कर और कर्ण बंदकर, दसवें मास में धरणी पर उदित होकर, अज्ञानांधकार नामक तिमिर से आच्छन्न होकर, कुछ वर्ष स्तन्यपान में, कुछ वर्ष अन्नप्राशन में, भक्ष्य-भोज्य-लेह्य-चोष्य-पानीय से परितृप्त होकर, इस प्रकार द्वादश वर्ष तक अज्ञान-पूर्ण कृत्य करते रहता है। सोलहवें वर्ष में पंचेद्रियों से उत्तेजित होते हुए, राग-मद-मात्सर्य से

मत्तगजगमन वाला होता हुआ, जाति-वर्ण- के बारे में न सोचकर, वर्णाश्रम धर्मों के क्रम को छोड़कर, जीव हिंसायुक्त बन जाता है। एकविंशति (इक्कीस) वर्ष से संसारांधकार (गृहस्थी रूपी अंधकार) में लगकर, पुत्रेषणा, दारेषणा, धनेषणा नामक ईषणत्रय में फंसकर, तुम्हें नहीं देख पाता। पंचाशत वर्ष (पचासवें वर्ष) से जब सत्व के कम हो जाने पर, जरा-भार से संस्खलित होता रहता है। पंचसप्तति (पचहत्तर) वर्ष से श्लेष्म से युक्त हो, अंधत्व, बधिरत्व, उदासीनत्व, उच्छिष्टत्व को प्राप्त हो रहता है। वात-पैत्य-श्लेष्म संकलित द्वन्द्व रोगों में मग्न होकर, शतवर्षों के भीतर मरकर, इहलोक में कलेबर को छोड़कर यातना-शरीर-धारी होते हुए, यमलोक में जाता है, अति घोर-महाघोर-बाधा रूपी नरक-यातनाओं से कुढते हुए, असिपत्र-वन नामक वन-भूमियों में अत्यंत दुखी होते हुए, घूमता रहता है। यह समस्त प्रकार सुनकर, मैं भयभीत होकर, आपके अमित कल्याण गुणों की प्रशंसा करने लग गया। मुझ पर कृपा दरसाकर रक्षा करो न हे श्री वेंकटेश्वर!

-151-

हे देवनारायण! परब्रह्म स्वरूप! अखिलांड-कोटि ब्रह्माड के नायक! हे पुराण पुरुष! पुंडरीक-वंद्य! कपट-नाटक सूत्रधारी! अगणित महिमावतार! सकल कल्याण गुण वर्णित! सकल जगदाधार! आश्रित कल्पभूजा! शरणागत-वज्रपंजरा! कारुण्यावतार-निधी! भुक्ति-मुक्ति फलदायके! शंख-चक्र-गदा-शारङ्गायुधधारी! कोदंडदीक्षागुरु! दशरथराज तनये! कौसल्या गर्भ रूपी रत्नाकर के सुधाकर! भरताग्रज!

सौमित्री-भक्ति-प्रिये ! शत्रुघ्न द्वारा निरंतर सेवित ! भक्त पराधीन ! इक्ष्वाकु कुल तिलके ! पक्षींद्र वाहन वाले ! देवादिदेव ! ताडगाप्राणों का अपहरण (संहार) करने वाले ! विश्वामित्र के यज्ञ के प्रतिपालक ! यज्ञकर्ता ! यज्ञभोक्ता ! सर्वं विष्णुमयं जगत्, श्रुतिनिकर-प्रवेशित ! अहल्या शाप विमोचक ! पुरहर (शिव) के कार्मुक (धनुष) का खंडन करने वाले ! सीता से विवाह करने वाले ! परशुराम के पराक्रम का हरण करने वाले ! चित्रकूटाचल पर निवास करने वाले ! विराध नामक दैत्य का संहार करने वाले ! शरभंग का दर्शन करने वाले ! दंडकारण्य को निलय (निवास-स्थान) बनाने वाले ! शूर्पणखा की नासिका का छेदन करने वाले ! खर-दूषण-त्रिशिर आदि चतुर्दश-सहस्र दानवों के सिर काट डालने वाले ! मारीच-मायामृग का शिकार करने वाले ! योजना के बाहुओं का खंडन करने वाले ! जटायु - मुक्तिदायक ! शबरी पर प्रसन्न होने वाले ! पंचवटी तीर पर निवास करने वाले ! आंजनेय प्रियालंकार ! माल्यवत्-प्रवेश करने वाले ! वालि का निग्रह (वध) करने वाले ! लवणांबुधि को कल्लोलित करने वाले ! दक्षिणसिंधु पर सेतु बांधने वाले ! विभीषण के राज्य के स्थापनाचार्य ! सुवेलाद्रि प्रवेशा ! कुंभ-निकुंभ-मकराक्ष-धूम्राक्ष-विरूपाक्ष-अतिकाय-महाकाय-कंपन-अकंपन - प्रहस्त-रक्तवर्ण - अग्निवर्ण - सर्परोम - वृश्चिकरोम आदि राक्षसों का शिरच्छेद करने वाले ! इंद्रजित के सिर को काट देने वाले वीर ! रावण रूपी गिरि के लिए वज्रायुध ! पंक्तिकंठ (रावण) के सिर काट देने वाले ! कुंभकर्ण का नाश करने वाले ! छप्पन देशों पर निश्चल रूप से पालन करने वाले ! श्री राघवेश्वरा ! ध्यान दो हे श्री वेंकटेश्वर !

-152-

हे अर्जुन के सखा ! तुम्हारी परिभाषा के अनुसार, पुण्य करनेवाले देवताओं को ऊर्ध्वलोक, पाप करने वाले राक्षसों को अधोलोक, मिश्रित पाप-पुण्य वाले मनुष्यों को मर्त्यलोक (भूलोक), सुज्ञानियों को परमपद का नियम बनाया और उन्हें उस प्रकार जन्म देकर त्रिलोक-बंधु बने हुए हो। तुम किसी का अपकार करने वाले नहीं हो। वे लोग अपने-अपने कौशल और अपराधों से तुम को प्रसन्न बनाकर जीवित रहते हैं तो कुछ तुम से विरोध के कारण मरते हैं। यह ऐसा ही विधान है, तुम तो लोकोपकारी हो। तुम्हारे प्रभाव को न जानने वाले, तुम्हारी निंदा करते हैं, जानने वाले महात्मा तुम्हारी प्रशंसा करते हैं। पक्ष और विपक्ष तो तुम्हारे लिए नहीं है। इसके लिए वेद-शास्त्र-पुराण-इतिहास साक्षी हैं। तुम्हारे दास तो तुम्हारे लिए कोई प्रण (कसम) खा सकते हैं। आदेश दो हे श्री वेंकटेश्वर !

-153-

हे अनंत कल्याणगुणनिधि ! तुम्हें भक्तवत्सल कहने में संदेह क्यों ? उसके लिए प्रह्लाद ही साक्षी है। तुम्हारे शरणागत-वज्र-पंजर बिरुद पर संदेह क्यों ? उसके लिए विभीषण ही साक्षी है। दुरितों को दूर करने वाले हो, यह कहने में तर्क-वाद क्यों ? उसके लिए अहल्या ही साक्षी है। तुम्हारे आर्तजन-परायण होने में शंका कैसी ? इसके लिए करिराज ही साक्षी है। अगणित वेदनाओं का अवसाद (निर्मूलन) करने वाले कहने में असत्य कहाँ ? उसके लिए ध्रुव ही साक्षी है। इन सब को तुम्हारे

महित-प्रभाव के परिणाम जानकर, तुम्हारे नामोच्चारण की शरण ली है हे श्री वेंकटेश्वर !

-154-

हे इंद्रादिविनुता ! सुना, गौतम महामुनि शरणागति के प्रभाव को जानते हैं ! तुम्हारे नाम-कीर्तन (के प्रभाव को) पार्वती जानती हैं। तुम्हारी जिह्वा की रुचि को जानते हैं विदुर। श्रीकांतामणि (लक्ष्मी) तुम्हारे मनोभाव को जानती है। धनंजय (अर्जुन) तुम्हारे महत्व को जानता है। वेणुनाद तुम्हारे समस्त विद्या-विशेषों को जानता है। कौस्तुभ और श्री तुलसी वनमालिकाएँ तुम्हारे अलंकार को जानती हैं। वैनतेय (गरुत्मान) तुम्हारे जव (वेग) को जानता है। शारङ्ग, गदा, आदि दिव्यायुध तुम्हारे बलपराक्रम को जानते हैं। गोपांगनाएँ तुम्हारे रूप-विभ्रम को जानतीं है। वामदेव तुम्हारे भुजा विशेष को जानता है। तुम्हारे भक्त-वात्सल्य को वैष्णव-भागवत जानते हैं। वैकुंठ में तुम्हारे सन्निधान (निकट) में रहने वाले भक्त तुम्हारे शौर्य और शांति की महिमाओं को जानते हैं। पूतना, हिरण्याक्ष, रावण, कुंभकर्ण, जय-विजय आदि तुम्हारे तेज को जानते हैं। सहस्र जिह्वाओं वाले आदिशेष भी तुम्हारी स्तुति नहीं कर सकता हे श्री वेंकटेश्वर !

-155-

हे स्वामी ! अपने रक्तमांसों के कारण ही मद है, मद के कारण ही इंद्रिय, इंद्रियों के कारण ही आकार है। इसपर बुढापे के आक्रांत होने पर मैं अन्यों के लिए उपयोगी नहीं रह जाता। मेरे प्रयत्न में दूसरों के सहयोग

न देने पर तामसी भाव उत्पन्न होते हैं। तब मेरे शरीर - पोषण - बुद्धि, देवताभक्ति, पापरहित चिंता, पुण्य संग्रह — सब नष्ट हो जाते हैं। अपने अपराधों के बारे में क्या कहूँ ? तुम्हीं दया दिखाकर कृतार्थ बना दो हे श्री वेंकटेश्वर !

-156-

समस्त लोक विस्तारक ! तुम्हारे लिए स्वस्ति (कल्याण) हो। हे पुराण-पुरुषोत्तम ! श्री लक्ष्मी के पति ! कुंकुमांकित वक्ष-स्थल वाले ! गांभीर्य युक्त ! सनक-सनंदन-सनत्कुमार-सनत्सुजात-नारद-आदि मुनींद्रों से वंदित ! बलि-विभीषण-प्रह्लाद-अर्जुन-अंबरीष-रुक्मांगद-गजेंद्र-गुह (निषाद)-भृगु-मृड-भारद्वाज - मार्कंडेय - गौतम-दूर्वासा-व्यास-वाल्मीकि आदि मुनिगण से सेवित ! श्रुतिप्रिय पूजिते ! ब्रह्मादि सुरगण वंदिते ! मृत्युंजये ! त्रिमूर्त्यात्मके ! इंद्र-अग्नि-यम-निर्ऋत-वरुण-वायु-कुबेर-ईशान नामक अष्टदिक्पालकों के ईश्वर ! क्षीराब्धि-शयने ! उत्साह से उज्ज्वल अलंकार (मुख) बिंब वाले ! समंचित नवरत्नखचित पांचजन्य-ज्वालाभिराम ! मत्स्य, कूर्म, वराह, नारसिंह, वामन, श्रीराम, राम, कृष्ण, बौद्ध, कल्कि आदि अवतार धारण करने वाले ! बलि को बांधने वाले ! त्रिविक्रम-मूर्ती ! जमदग्नि राम (परशुराम) अवतार वाले। शंख-चक्र-गदा-शारङ्ग-शारासन-नंदक आयुध धारी ! कोदंडपाणी ! वेदांतवेद्या ! मणिमयमकुट वाले ! पुंडरीकाक्षा ! श्री कोटि-पुण्यों का वर देने वाले ! कावेरी के रंगनाथ ! हे श्री वेंकटेश्वर !

-157-

हे हाटकगर्भ (ब्रह्मा) के जनक ! वेदव्यास-वाल्मीकि आदि मुनीश्वर तुम्हारी सेवा कर, तुम्हें वश में करके भी मोक्ष मांगना कैसे भूल गए ? शास्त्र पढ़ने में परब्रह्म को खोजने वाले विद्वान ब्रह्मणोत्तमों का विवेक कहाँ गया ? ब्रह्मादि देवता तुम्हारी सेवा कर, तुम्हारे सायुज्य को क्यों प्राप्त नहीं कर पाए ? उनके भाग्य, पता नहीं, कहाँ गए ? उसे वैसे रहने दो। सुना है, आदिदेव तुम अब सबके हृदयों में अवस्थित हो । तुम्हारी महिमा सोचकर तुमसे प्रेम किए हुए हैं हे श्री वेंकटेश्वर !

-158-

हे करुणा के वरुणालय (समुद्र) ! अतिप्रज्ञा विलसित ! अत्यंत मनोहर ! जीवनदी (सदा बहने वाली) के समान अविरल रूप से कल्पांत तक बहते रहने वाले और तुम्हारी लीला-विभूति से युक्त इस विश्व को प्रव्यक्त रूप से भासित कराते हुए, जीवों को भ्रम में डाल रहे हो हे देव ! और इस सब के कर्ता होकर, अव्यक्त होकर, अंतर्यामी होकर भी, पकड में न आकर, छिपे हुए क्यों हो ? दिखाई पड़ने पर आर्तजनों के कोलाहल के बढ़ जाने का भय है क्या ? उसके लिए तुम्हारे सिवा गति कौन है ? मुख से निकली बात के कानों में पड़ने तक तुम आर्तों की गुहार को सुन लेते हो ? धूर्तों की पकड़ से बहुत दूर रहते हो ! आर्ति को कितनी योग्यता प्रदान की है ! इतनी दया से हमारी रक्षा करने वाले तुम्हें आंख भर देखना चाहते हैं। इसी जन्म में हमारी इच्छा को सफल बना दो न हे श्री वेंकटेश्वर !

न देने पर तामसी भाव उत्पन्न होते हैं। तब मेरे शरीर - पोषण - बुद्धि, देवताभक्ति, पापरहित चिंता, पुण्य संग्रह — सब नष्ट हो जाते हैं। अपने अपराधों के बारे में क्या कहूँ ? तुम्हीं दया दिखाकर कृतार्थ बना दो हे श्री वेंकटेश्वर !

-156-

समस्त लोक विस्तारक ! तुम्हारे लिए स्वस्ति (कल्याण) हो। हे पुराण-पुरुषोत्तम ! श्री लक्ष्मी के पति ! कुंकुमांकित वक्ष-स्थल वाले ! गांभीर्य युक्त ! सनक-सनंदन-सनत्कुमार-सनत्सुजात-नारद-आदि मुनींद्रों से वंदित ! बलि-विभीषण-प्रह्लाद-अर्जुन-अंबरीष-रुक्मांगद-गजेंद्र-गुह (निषाद)-भृगु-मृड-भारद्वाज - मार्कंडेय - गौतम-दूर्वासा-व्यास-वाल्मीकि आदि मुनिगण से सेवित ! श्रुतिप्रिय पूजिते ! ब्रह्मादि सुरगण वंदिते ! मृत्युंजये ! त्रिमूर्त्यात्मके ! इंद्र-अग्नि-यम-निर्ऋत-वरुण-वायु-कुबेर-ईशान नामक अष्टदिक्पालकों के ईश्वर ! क्षीराब्धि-शयने ! उत्साह से उज्ज्वल अलंकार (मुख) बिंब वाले ! समंचित नवरत्नखचित पांचजन्य-ज्वालाभिराम ! मत्स्य, कूर्म, वराह, नारसिंह, वामन, श्रीराम, राम, कृष्ण, बौद्ध, कल्कि आदि अवतार धारण करने वाले ! बलि को बांधने वाले ! त्रिविक्रम-मूर्ती ! जमदग्नि राम (परशुराम) अवतार वाले। शंख-चक्र-गदा-शारङ्ग-शारासन-नंदक आयुध धारी ! कोदंडपाणी ! वेदांतवेद्या ! मणिमयमकुट वाले ! पुंडरीकाक्षा ! श्री कोटि-पुण्यों का वर देने वाले ! कावेरी के रंगनाथ ! हे श्री वेंकटेश्वर !

-157-

हे हाटकगर्भ (ब्रह्मा) के जनक ! वेदव्यास-वाल्मीकि आदि मुनीश्वर तुम्हारी सेवा कर, तुम्हें वश में करके भी मोक्ष मांगना कैसे भूल गए ? शास्त्र पढ़ने में परब्रह्म को खोजने वाले विद्वान ब्रह्मणोत्तमों का विवेक कहाँ गया ? ब्रह्मादि देवता तुम्हारी सेवा कर, तुम्हारे सायुज्य को क्यों प्राप्त नहीं कर पाए ? उनके भाग्य, पता नहीं, कहाँ गए ? उसे वैसे रहने दो। सुना है, आदिदेव तुम अब सबके हृदयों में अवस्थित हो। तुम्हारी महिमा सोचकर तुमसे प्रेम किए हुए हैं हे श्री वेंकटेश्वर !

-158-

हे करुणा के वरुणालय (समुद्र) ! अतिप्रज्ञा विलसित ! अत्यंत मनोहर ! जीवनदी (सदा बहने वाली) के समान अविरल रूप से कल्पांत तक बहते रहने वाले और तुम्हारी लीला-विभूति से युक्त इस विश्व को प्रव्यक्त रूप से भासित कराते हुए, जीवों को भ्रम में डाल रहे हो हे देव ! और इस सब के कर्ता होकर, अव्यक्त होकर, अंतर्यामी होकर भी, पकड में न आकर, छिपे हुए क्यों हो ? दिखाई पड़ने पर आर्तजनों के कोलाहल के बढ़ जाने का भय है क्या ? उसके लिए तुम्हारे सिवा गति कौन है ? मुख से निकली बात के कानों में पड़ने तक तुम आर्तों की गुहार को सुन लेते हो ? धूर्तों की पकड़ से बहुत दूर रहते हो ! आर्ति को कितनी योग्यता प्रदान की है ! इतनी दया से हमारी रक्षा करने वाले तुम्हें आंख भर देखना चाहते हैं। इसी जन्म में हमारी इच्छा को सफल बना दो न हे श्री वेंकटेश्वर !

-159-

हे आदिशेष पर लेटने वाले ! उपवास-व्रतों से तुम्हें प्राप्त करना चाहें तो वह समुद्र पर सेतु-बंधन के समान है। तुम किसी भी उपाय से असाध्य हो। इसके दृष्टांत के रूप में तुम्हारी शरण में आकर, प्रह्लाद-नारद-शुक-भीष्म-विभीषण-करि-शबरी-अक्रूर-विदुर - हनुमान आदि भागवत (भक्त) लोक में प्रख्यात हुए। यह हमारे लिए दृष्टांत है, इसे मानकर केवल तुम्हारा भजन कर, निश्चिंत रहना चाहते हैं हे श्री वेंकटेश्वर !

-160-

हे करुणा कटाक्ष वाले ! उभय सेनाओं (कौरव-पांडवों की) के मध्य निरायुध हो, अर्जुन के रथ का सारथ्य करते समय, तुम्हारे दास भीष्म ने तुम्हें चक्र हाथ में धारण करने के लिए बाध्य किया। तुम्हारी पुत्री गंगाभवानी शिव के जटाजूट पर चढ बैठी। तुम्हारी शय्या बने आदिशेष ने ब्रह्मांड को सिर पर उठा लिया। तुम्हारा वाहन खगेंद्र (गरुड) इंद्रादियों को हराकर, अमृत ले गया। तुम्हारे दासं ध्रुव ने ब्रह्म-लोक को आक्रांत किया। नारद देव - असुरों में लड़ाई पैदा कर रहा है। रुकमांगद ने यमलोक को बिगाड दिया। शुक ने मुक्ति को पा लिया। तुम्हारे दास आंजनेय ने अमरों के लिए भी अभेद्य लंका-नगर को जला डाला। तुम्हारे भक्त कुचेल (सुदामा) ने मुट्ठी भर चिउडे समर्पित कर, संपदाओं को प्राप्त किया। इस प्रकार तुम्हारे दास तुम्हारे दिए वरदान से, तुम से बड़े बनते जा रहे हैं। अपने दासों के प्रति वात्सल्य और तुम्हारी सेवा के प्रभाव को लोक में प्रचलित होते रहने दिया। तुम्हारे किंकरों के

चरित्र, तुम्हारी उदारता को सुनकर ही, तुम्हारी प्रशंसा कर रहा हूँ हे श्री वेंकटेश्वर !

-161-

हे देव ! ब्रह्म-रुद्रादि देवताओं का और देवतागणों का राक्षसों का संहार करने पर, उन्हें हिंसाकर्म का पाप नहीं लगता। अप्सारागणों का इच्छानुसार भोग करने पर, उन्हें व्यभिचार का पाप नहीं लगता। सोमपान और पुरोडाश का भक्षण पुण्यप्रद है। तुम जिन दासों पर प्रसन्न बनते हो, उनका कोई भी अकृत्य करने से उन्हें कोई दोष नहीं लगता। तुम्हारे कल्पित सहज साधारण कर्म है। इन सब के तुम अंतर्यामि हो। तुम्हारे बगैर किए जाने वाले कृत्य कहीं हैं क्या ? पुण्य-पाप बताने वाले पुराणों को आदेश दो कि महर्षियों को सुव्रत देने वाले तुम्हारे किंकरों को दुरित (पाप) नहीं लगते हे श्री वेंकटेश्वर !

-162-

हे स्वामी ! अयस्कांत (चुंबक) की ओर लगावें तो सुइयां अतिशीघ्र चिपक जाती हैं, इसी प्रकार स्त्री और पुरुष परस्पर अवलोकन से एक दूसरे से चिपक जाएँ, ऐसा कर रही है तुम्हारी माया। उससे कैसे बचा जा सकता है ? तिंत्रिणी-शलाटुओं (इमली के टुकडों) के लिए बाला के लार टपकाने के समान, तुम्हारा प्रभाव सुवर्ण के लिए मन को लालायित कर रहा है। इसे कैसे नकारा जा सकता है ? चुरा ले जाने पर कोतवालों के रस्सियों से बांध लाकर, चुराए द्रव्यों को गले में बांध जुलूस निकालने के समान, किए गए कर्मों को भोगने के लिए बाध्य करने वाली तुम्हारी

सामर्थ्य से कैसे बचा जा सकता है ? अब ये जीव किस प्रकार आफतों से छूटकर बचे रह सकते हैं ? अमृत के पिंड निकट रहने पर, भूख से तड़पने की क्या जरूरत है ? तुम मेरे बने हो। तुम्हारे चरणों की सेवा कर जीवन बिताऊँगा हे श्री वेंकटेश्वर !

-163-

नागकंकण (शिव) के चाप को तोड़ने वाले ! पूर्व जन्म में किए कर्मों को भोगे बिना नहीं रहा जा सकता। वह (भोगना) हमसे नहीं हो सकता। हमारे किए अपराधों के अपने सिर पर रहते समय, क्या कहकर तुम से निवेदन करूँ ? तुम्हारा दास्य रूपी वज्रपंजर मेरे पास है। तुम्हारा नाम-स्मरण नामक खड्ग है। तुम्हीं हम पर दया कर, हमारा उद्धार करो हे श्री वेंकटेश्वर !

-164-

हे अमृतमंथन करने वाले ! महर्षि लोग आपको चाहकर अति घोर तप करते हैं। उनके शरीरों पर पक्षी घोंसले बनाते हैं, नखशिखपर्यंत चींटियां बांबियां बना लेती हैं। ऐसे नियम बनाकर (कठोर तपस्या कर) तुम्हारा ध्यान कर, तुम को कैसे प्रसन्न बना सकेंगे ? ऐसे मार्ग हम जैसे लोगों के लिए अतिदुर्लभ हैं। तुम को हाथ जोड़कर प्रणाम कर सकते हैं, बस इससे ज्यादा कुछ नहीं। दुर्लभ कार्यों को करने में हम समर्थ नहीं हैं। तुम को राजी कर, एक निवेदन करेंगे। तुम को न जानकर माया के अधीन रहकर, तुम्हारी लीला के अधीन हो रहे। जानकारी हुई तो तुम्हारे के दास बनेंगे। इसीलिए इन दो प्रकारों से हम तुम्हारे ही हैं। इस

प्रकार से ये सब तुम्हारे ही कृत्य हैं। कभी न कभी तुम को मेरी रक्षा करना ही पड़ेगा। हम दोनों में स्वामी-भृत्य न्याय अवश्यंभावी है। यह आवश्यक है। मैं तो तुम्हारे नाम को भूलने वाला नहीं हूँ। सुना, पूर्व में तुम रामावतार में विश्वामित्र के यज्ञ की संरक्षा कर, जनक के घर जा रहे थे। मार्ग में अहल्या और तृण-गुल्म लतादि तुम्हारे चरणों के स्पर्श से पावन बने हैं। उन्होंने कौन सा तप किया था ? हमारे लिए भी तुम्हारे चरण ही गति हैं हे श्री वेंकटेश्वर !

-165-

हे माया शरीरधारी ! कामातुर जीव यदि तुम्हारे चरणों का स्मरण करें तो भी कांता की देह को छोड़कर, तुम्हारे प्रकाशमान चरणों पर उनका मन नहीं लगता। पूर्व में देखे गए रूप-भाव भीतर विरह उत्पन्न करते हैं, पर कोई परिणाम नहीं निकलता। इसके लिए बाह्य इंद्रिय-द्वार ही बाहर के साधन हैं। अपना मन ही अपने आप को भीतर की ओर उन्मुख करता है। इसलिए इन साधनों से परे तुम्हारी मूर्तियों के दर्शन कर, उन रूपों को अपने मन में धारण कर, तुम्हें देखता रहेगा तो जीव ब्रह्मानुभव को प्राप्त कर, सफल हो जाएगा। ये दोनों तुम्हारी ही महिमाएँ हैं। विवेक से जानने वालों के लिए मुक्ति हथेली में है हे श्री वेंकटेश्वर !

-166-

हे रमा के पती ! तुम विरजानदी के किनारे, वैकुंठनगरवासी होकर, मुक्ता-रत्न-वज्र-वैडूर्य-गोमेधिक-पुष्यराग-मरकत-माणिक्य-आदि अलंकारों से शोभित अट्टालिकाओं में, माणिक्य शोभित सहस्र-फणों

से प्रज्वलित (शोभायमान) आदिशेष के, शय्या बन कर शोभित होने पर, श्रीदेवी, भूदेवी, नीलांदेवी के तुम्हें कैंकर्य (सेवाएँ) करते रहने पर, शंख-चक्र-गदा-शारङ्ग-कोदंड आदि आयुधों के रूप धारण कर सेवा करते रहने पर, विष्वक्सेन, वैनतेय आदि उभय चामर डुलाते रहने पर, सनक-सनंदन-सनत्कुमार-सनत्सुजात आदि भक्तों के सेवा करते रहने पर, तुंबुरु,नारद आदि के निरंतर गान करते रहने पर, अप्सराओं के नृत्य करने पर, किन्नर-गंधर्व-गीर्वाण-यक्ष-पन्नग-गुह्यकों के स्तुतियाँ करने पर, परमेष्ठि (ब्रह्मा) - फाललोचन (शिव) - पाकशासनि (इंद्र)-वैश्वानर (अग्नि)-यम, वरुण-वायु-निर्ऋति-कुबेर-ईशान आदि अष्ट दिक्पालकों और नवब्रह्मा, एकादशरुद्र, द्वादश आदित्य, अष्टवसु, सप्तमरुत्, चित्रगुप्त, नवग्रह, सप्तसागर, सप्तनदियाँ, सप्तकुलपर्वत, कृतयुगादि चतुर्युग-कन्याएँ (आदि के) विनय और नम्रता से सेवाएँ करने पर, सालोक्य-सामीप्य सारूप्य-सायुज्य को प्राप्त पुण्य-पुरुषों के आपके नगर में बहुतायत से रहने पर, नवनिधियाँ, ऐरावत, उच्चैश्रव, कामधेनु, कल्पवृक्ष, चिंतामणि आदि से उपलब्ध अष्ट-ऐश्वर्यों के शोभायमान होने पर, सभागार में भरी सभा में बैठकर, निवेदन की उक्तियों का पालन करते हुए, अभय-प्रदान करते हुए, मंदस्मित वदनारविंद से रहकर, सर्वजीव - दयापरता के कारण, सुना है, तुम अनंत रूप धारण करते हो। मत्स्यावतार में सोमकासुर का संहार कर ब्रह्मा को वेद प्रदान किए। कूर्मावतार में मंदरगिरि को वहन कर, अपने दास देवताओं को सकल-ऐश्वर्यों को जुटा दिया। वराहावतारी हो हिरण्यकशिप का वध कर, पृथ्वी को चटाई के समान फैला दिया। नरहरिरूप धारण कर

से प्रज्वलित (शोभायमान) आदिशेष के, शय्या बन कर शोभित होने पर, श्रीदेवी, भूदेवी, नीलांदेवी के तुम्हें कैंकर्य (सेवाएँ) करते रहने पर, शंख-चक्र-गदा-शारङ्ग-कोदंड आदि आयुधों के रूप धारण कर सेवा करते रहने पर, विष्वक्सेन, वैनतेय आदि उभय चामर डुलाते रहने पर, सनक-सनंदन-सनत्कुमार-सनत्सुजात आदि भक्तों के सेवा करते रहने पर, तुंबुरु,नारद आदि के निरंतर गान करते रहने पर, अप्सराओं के नृत्य करने पर, किन्नर-गंधर्व-गीर्वाण-यक्ष-पन्नग-गुह्यकों के स्तुतियाँ करने पर, परमेष्ठि (ब्रह्मा) - फाललोचन (शिव) - पाकशासनि (इंद्र)-वैश्वानर (अग्नि)-यम, वरुण-वायु-निर्ऋति-कुबेर-ईशान आदि अष्ट दिक्पालकों और नवब्रह्मा, एकादशरुद्र, द्वादश आदित्य, अष्टवसु, सप्तमरुत्, चित्रगुप्त, नवग्रह, सप्तसागर, सप्तनदियाँ, सप्तकुलपर्वत, कृतयुगादि चतुर्युग-कन्याएँ (आदि के) विनय और नम्रता से सेवाएँ करने पर, सालोक्य-सामीप्य सारूप्य-सायुज्य को प्राप्त पुण्य-पुरुषों के आपके नगर में बहुतायत से रहने पर, नवनिधियाँ, ऐरावत, उच्चैश्रव, कामधेनु, कल्पवृक्ष, चिंतामणि आदि से उपलब्ध अष्ट-ऐश्वर्यों के शोभायमान होने पर, सभागार में भरी सभा में बैठकर, निवेदन की उक्तियों का पालन करते हुए, अभय-प्रदान करते हुए, मंदस्मित वदनारविंद से रहकर, सर्वजीव - दयापरता के कारण, सुना है, तुम अनंत रूप धारण करते हो। मत्स्यावतार में सोमकासुर का संहार कर ब्रह्मा को वेद प्रदान किए। कूर्मावतार में मंदरगिरि को वहन कर, अपने दास देवताओं को सकल-ऐश्वर्यों को जुटा दिया। वराहावतारी हो हिरण्यकशिप का वध कर, पृथ्वी को चटाई के समान फैला दिया। नरहरिरूप धारण कर

हिरण्याक्ष का संहार कर, अपने भक्त प्रह्लाद की रक्षा की। वामनावतार में बलि को बांधकर पाताल में ढकेल दिया। परशुरामावतार में कार्तवीर्यार्जुन आदि छप्पन देशों के राजाओं का संहार कर, उनके कलेवरों (मृत देहों) से स्वर्ग के सोपान बनाकर, पितृदेवताओं के मोक्षगमन के लिए रखा। रामावतार में ताड़का प्राणापहरण, विश्वामित्र के यज्ञ की रक्षा, अहल्या-शाप-विमोचन, श्रीकंठ (शिव) के चाप का खंडन, सीता से विवाह, भार्गव (परशुराम) का गर्वापहरण, यौवराज्य में विघ्न, गुह (निषाद) से संलाप, जटा वल्कल-धारण, भरद्वाज-संतोषण, चित्रकूटाद्रि पर निवास, भरत को पादुकाद्वय देकर सम्मानित करना, विराध का वध, शरभंग की रक्षा, अत्रि और अनसूया से पूजाएँ प्राप्त करना, अगस्त्य-सुतीक्ष्ण-मतंग आदि समस्त मुनिवरों के आश्रमों में प्रवेश करना, मुनियों को अभय प्रदान करना, पंचवटीतीर पर रहते समय शूर्पणखा का नासिका-छेदन, खर-दूषणादि चतुर्दश सहस्र दानवों का संहार, मारीच मारण, जटायु को मोक्ष प्रदान, कबंध-वध, शबरी की पूजाएँ ग्रहण करना, वालि-मर्दन, सुग्रीव को किष्किंधा का राज्य, दर्भशयन, गंधिनाथ (समुद्र) को बाण की नोक पर लाना, सेतु बंधन, सुवेलाद्रि-निवास, रावण, कुंभकर्ण-मेघनाद-अतिकाय-महाकाय-धूम्राक्ष, यूपाक्ष, शोणिताक्ष, मकराक्ष, खड्गरोम, वृश्चिकरोम, सर्परोम, अग्निवर्ण, कंपन, अकंपन, प्रहस्त आदि समस्त राक्षसों का प्राणापहरण (वध), विभीषण का लंका साम्राज्य पर अभिषेक, पुष्पकारूढ हो अयोध्या का आधिपत्य ग्रहण कर, एकादश सहस्रवर्ष (राज्य) पालन करना, हलधर के अवतार में दुष्ट राक्षसों का संहरण, कृष्णवतार में बाल-क्रीडा-विनोद, गोपालकत्व,

पूतना-शकटासुर-कुक्कुटासुर, धेनुकासुर, बकासुर, वत्सासुर आदि दुष्ट-राक्षसों का गर्वापहरण, गोवर्धनगिरि धारण, गोनिर्मिति, गोपांगना-जारत्व, कंस, शिशुपाल-नरकासुर-बाणासुर आदि दुष्ट-निग्रहण, द्वारका-निर्माण, अर्जुन-सारथित्व, दुर्योधन के कुल का नाश, विदुर-अक्रूर-मुचिकुंद आदि भक्त जनों पर कटाक्ष वीक्षण, कल्कि के अवतार में दुष्ट निग्रह, शिष्ट प्रतिपालन, वर्णाश्रम धर्मों का निर्णय, इस प्रकार युग-युग में अवतार धारण कर, धर्म का निर्वाह करना, सर्वजीव-दयापरता से ताम्र शिला मृण्मय-दारु रूपों से भक्तों की रक्षा करना, और गृहे-गृहे तिरुवाराधन के रूप में स्थित होकर, भक्तों पर दया दरसाते रहते हो। ऐसे तुम्हारे प्रभावों का वर्णन कैसे करूँ ? अणु-रेणु-तृण-काष्ठ में परिपूर्ण रूप से परिव्याप्त रहते हो। ऐसे तुम्हारे प्रतापों को सुनकर, इसमें एक उपाय को सोच निकाला। समस्त जीवों में परिपूर्ण हो रहने वाले हो। अतः मुझमें तुम्हारे रहने से मुझसे होने वाले कृत्य-अकृत्य तुम्हारे ही करने से, तुम्हीं को प्रिय हैं, ऐसा निश्चय कर, समस्त अपराधों को तुम्हीं पर आरोपित कर, मैं मुक्त हुआ हूँ। "कर्ता भोक्ता जनार्दन" के श्रुतिवचन के अनुसार, मुझपर कटाक्ष-वीक्षण (कृपा की दृष्टियाँ) प्रसरित कर, अपना दासानुदास मानकर, रक्षा करो हे श्री वेंकटेश्वर !

* * *

T.T.D. Religious Publications Series No. 238

Price: Rs. 25/-



आचार्य भीमसेन 'निर्मल' हिन्दी और तेलुगु साहित्य के अधिकारी विद्वान हैं। वे उस्मानिया विश्वविद्यालय के हिन्दी विभागाध्यक्ष रह चुके हैं। तुलनात्मक अनुशीलन एवं अनुवाद के द्वारा आपने राष्ट्रीय एकता को सुदृढ बनाने का सार्थक प्रयास किया है। वर्तमान सन्दर्भ में इस सेतुबन्धन का महत्त्व निर्विवाद है। तेलुगु की प्रसिद्ध कृतियों जैसे रंगनाथरामायण, पोतन कृत भागवत, पांडुरंगमाहात्म्य, विश्वंभरा आदि का हिन्दी अनुवाद प्रस्तुत करने का श्रेय प्रो. निर्मल को प्राप्त हुआ है। इसी प्रकार आपने ज्ञानेश्वरी भगवद्गीता, रससिद्धान्त, प्रेमरससिद्धान्त, अमृत संदेश, वेदमाता गायत्री, रामभक्ति रहस्य आदि का भाषान्तर तेलुगु में उपस्थित किया है। इनकी लगभग ५० पुस्तकें और शताधिक निबन्ध अब तक प्रकाशित हुए हैं।

प्रस्तुत रचना ताल्लपाक पेद तिरुमलाचार्य के द्वारा तेलुगु में प्रणीत 'श्रीवेंकटेश्वर वचन' का हिन्दी रूपान्तर है। कलियुग वैकुंठ तिरुमल पुण्य धाम में विराजमान भगवान श्रीवेंकटेश्वर के प्रति भक्त हृदय से निसृत विविध भाव-सुमनों का यह हार अतीव रमणीय है, जिसमें भक्ति-कवित्व की अमूल्य निधि है। वचन, लयात्मक गद्य का एक सुन्दर काव्य-रूप है, जिसको भक्तजनों ने आत्मनिवेदन का साधन बनाया था। १५ वीं, १६ वीं शताब्दी की मूल रचना का यह हिन्दी अनुवाद साहित्यिक सौन्दर्य एवं भक्तिमाधुर्य से आपूर्ण है।

Published by **Dr. P. Krishnaiah**, I.A.S., Executive Officer, T.T.Devasthanams and printed at T.T.D. Press, Tirupati.